

जेन स्पष्टम दानधीर

अमल्य शालु दानुप्रायि

जेन प्रभावक धम १२२२



र राजा महारु लाला मुबनेन सहायनी भारी

समय २ ३२



साला उवाला मसाननी भारी

समय २ १

दशा दत्तकन्ध सूत्र की विषयानुक्रमिका.

पथ्य दशा-वीस असमाधिगे दोष	१	सस्य दशा-भिक्षक की १२ प्रतिमा	४४
द्वितीय दशा-उन्नीस सयबा दोष	४	अष्टम दशा-महावीर के ५ कल्याण	८५
तृतीय दशा-तेतीस अडातका	८	नवम दशा तीस महा मोहनीय स्वान	८७
चतुर्थ दशा आचार्य की ८ सम्पदा	१५	दशम दशान्वय नियाने बिस्तार से	९७
पंचम दशा-विषयगामी के १० स्थान	३०	इत्यनुक्रमणिका	
षष्ठम दशा आचरु की ११ प्रतिमा	४१		

६८ पथ्य पूज्य श्री काननजी ऋषिजीप्रहाराज के सम्पदाय के बाछमसवारी मुनि श्री अमोलकश्रुतिनी

सीक तीज वर्ष में १२ ई। श्राव्हों का बिंदी भागनुवाद किया, वन १२ ई। श्राव्हों की १०००-

१००० प्रतों को तीक पाँच ई। वर्ष में छपवाकर प्रसिद्ध है।

छापवा दत्तकान्वय भी उवाचमसादनी ने सब को इन का अमूल्य लाभ दिया है।

छापवा दत्तकान्वय भी उवाचमसादनी ने सब को इन का अमूल्य लाभ दिया है।

महाशुभक रामायणादुर साहा सुखदेवसहायजी उवाचमसादनी

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ प्रथम दशा ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

सप्तविंशतितम-दशा श्रुतस्कन्ध सूत्र-चतुर्थछंद

॥ प्रथम दशा ॥

णमो अरिदत्ताण, णमो सिद्धाण, णमो आयरियाण, णमो उवज्झायाण णमो लोए
सन्वत्साहुण ॥ १ ॥ सुयमे आऊसतेण भगवयाएव मक्खाय इह खलु धेरेहि भगवंतेहि
वीस असमाहिट्टाण पण्णाचा, ॥ कयरे खलु ते धेरेहि भगवतेहि वीस असमाहिट्टाणा
नमस्कार होवो अरिहत भगवंत को, नमस्कार होवो सिद्ध भगवत को, नमस्कार होवो आचार्य भगवत
को, नमस्कार होयो उपाध्याय भगवत का और नमस्कार होवो भोक्ता ररे सर्व सायु भगवत को ॥ श्री
सुगर्भ स्वाभी कहते है कि अहो आयुष्यन जम्मु ' सुनो, भगवंत श्री महावीर स्वाभीने ऐसा कहा है
आगे कहेंगे सो स्पष्टिर् भगवतने वीस अवसाधि दोष क स्यात्तक कहे है अहो भगवन् ! स्पष्टिर्
भगवतने आसपासी दे प के वीस स्यात्तक कौनेत्र कहे है १ अहो शिष्य ! स्पष्टिर् भगवतने वीस

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ प्रथम दशा ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

दशा श्रुतस्कन्ध सूत्र की प्रस्तावना

श्रुतसागर समुद्रत प्रणमामि जिनेश्वर ॥ दशाश्रुतस्कन्धस्य धार्मिक कराम्यह ॥ १ ॥

जिन जिनेश्वर से अग संपद् का उद्भव हुआ है उन जिनेश्वर को प्रणाम करके दशाश्रुतस्कन्धशास्त्र का द्वितीय पाषाणुवाक्य करता हूँ दश मध्ययना रूप श्रुत का स्कन्ध होने से इस का नाम तथा श्रुतस्कन्ध बन है यह चौथा छेद मूल है इस में मगधीयों के असमाधी मरना दापों का यावत् नियाणों का दृष्टान्त पुरक अच्छा बणन किया है समय की विगुदता चिम की मगधी व करणी का सम्पुणता से पल के दृष्टिको को इस शास्त्र के ज्ञाता होने की परमावश्यकता है

इन शास्त्र की एक नम तो मेरे पास की, एक मन कष्ट दश पावन करा करणीवर श्रीनागचन्द्रजी मातामही तरफ से प्राप्त हुई उस परसे यथामाने सन्तोषन करके पाठ लिखा है और तदनुसार भाषानुवाद किया है जिस में ना अनुदता रही हो उसे नष्ट कर विद्वदों पवन करेगे

उत्पादयति भवति ॥ ११ ॥ पोरणाई अधिकरणाइ खमितविउ सविताइ उदीरिता
भवति ॥ १२ ॥ अकाले सञ्ज्ञायाओ कारियावि भवति ॥ १३ ॥ ससरवखपाणिपादे
॥ १४ ॥ सदकरे ॥ १५ ॥ भेयकरे ॥ १६ ॥ झझकरे ॥ १७ ॥ कलह करे
॥ १८ ॥ सूरप्पमाण मोइए ॥ १९ ॥ एसणाइ असमियावि भवति ॥ २० ॥ एते
खलु धेहि भगवनेहि धीस असमाहिङ्गणा पणत्ता, चिचेभि ॥ १७० ॥ दसा सम्मत्त ॥ १॥*

आधरणावादे बोले-निन्दा कर, १० बारम्बार अन्यकी दुर्गुणों की ऊदीरणा करे, ११ नवे क्लेश झगडे मो पाहेछे
उत्पन्न न हुआ उस को उत्पन्न करे, १२ प्रथम का कुछ खान्त होगया सप्त सप्तावना होगये पुन' उस की
ऊदीरणा करे, १३ अकाल में स्वाध्याय करे अर्थात् काबिक सूत्र की तो दिन रात्रि के प्रथम और
मान्तिव प्रहर छहकर और उत्कालिक सूत्र की प्रातः सध्या पध्यान्ध और सापी रात्री में पठन करे,
१४ गुरुस्य के हाथ पाँव व भाजन पृथ्वी पानी आदि सचिप्त कर भरे हों उस से आहार आदि ग्रहण
करे, १५ प्रहर रात्रि गये पात्र मूर्धेद्वय न हावे वही तक जोर २ से बोले, (पाठ न्तर-परस्पर असमाधी
उत्पन्न करे) १६ साधुओं में सप में भेद करे फुट पडावे, १७ हर वक्त ज्यूजकर [तिरस्कार] युक्त वचन
पोढे, १८ साधुओं में या सप में झगडे उत्पन्न करे या फैलावे, १९ मूर्धेद्वय से मूर्धे अस्त तक-सब दिन
आहार उरे अर्थात् मुह पलता ही रहे, और २० आहार पक्ष पात्र स्थानक की पूरी एषणा नहीं करे
जैसा विवे वैना योगवे ॥ अओ अम्भू ! स्थविर भगवतने उक्त यीम स्थानक असमाधी दोष के समय में
असमाधी उत्पन्न करने के कहे हैं ॥ इति प्रथम अध्या समाप्तम् ॥ १ ॥

वण्णत्ता ? इमा स्मत्तु स धरेहि भगवतेहि धीस अतनहिट्टुणा पण्णत्ता सजह -- इवद्व
चारियादि भयनि ॥ १ ॥ अप्पमज्जिय चारियावि भवति ॥ २ ॥ पुप्पमज्जिय
चारियादि भयनि ॥ ३ ॥ अतिरिय सेज्जासणिय ॥ ४ ॥ रायणिय पारभासी ॥ ५ ॥
धेरोवघापाए ॥ ६ ॥ भूतोवघातीए ॥ ७ ॥ संजलणे कोहणे ॥ ८ ॥ पिठमसेयानि
भवति ॥ ९ ॥ अभिवक्खणं २ उधारित्ता ॥ ११ ॥ जवाइ अधिकरणाइ अप्पुग्गणाइ

वसवाधि ॥ के स्थानक करे हैं उन के नाप—१ दीप्रता मे दूध २ पाँच रसता बसे, ३ दिन को हरी से
देत बिना रात को रजोहरण मे पूत्र विना-बसे बड़े छयन करे हल पात्रादि बापरे, ३ मन्य स्थान देखे
पूने भोग भव स्थान घसे बड़े छयन करे व मंडोपकरण घर, ४ मतिरिक्त-भर्याद (चारिये जिस से)
अधिक देण्या स्थानक पात्र वात्क गावे और मोगदे, ५ रत्नाधिक अपन से गुणों वृद्ध वयोवृद्ध आचार्य
हृदय्याय मापु का परामर्शक, ६ दू इत्यादि तुल्य वचन से बोनाये, ६ स्वधिर-साठ वर्ष से अधिक
वयसले दय स्वधिर की १ वय से अधिक दीयाशाने दीक्षा स्वधिर, और स्थानाग समवायागादि सूत्र के
ज्ञान सूत्र स्वधिर इन को घन मृत्यु चिन्ता ७ भूतोपपातिक-पृथग्यादि पट्टकाया भीषों की पात चिन्तने
८ मदेर मंतस प्रोथित बना रहे या क्षीण में प्रोष करे, ९ पुष्ट पोत मली होवे, अर्थात् पीछे से मन्य का

॥ जिस प्रकार ईश्वरी मे गीत निबल बनना है इस प्रकार ही आमर्षी लोग के सेवन करने से सुख निबल बनता है

भुजमाणे सबले ॥ ४ ॥ रायपिंडे भुंजमाणे सबले ॥ ५ ॥ कीय, पामिचं, अचिच्छब्द,
 धर्णिसेट्ट, आहृदुदिज्जमाण भुजमाणे सबले ॥ ६ ॥ अभिक्खण पडिमाइखित्ता
 भुजमाणे सबले ॥ ७ ॥ अतो छमासरस गणाओगणं सकम्ममाणे सबले ॥ ८ ॥
 अतामासरस तथा उदगत्तव्यं करमाणे सबले ॥ ९ ॥ अतामासरस तस्मा माहट्टाण
 करमाणे सबले ॥ १० ॥ सागरिय पिंड भुजमाणे सबले ॥ ११ ॥ आउहिद्याए
 पाणइशय करमाणे सबले ॥ १२ ॥ आउहिद्याए मुसन्नाय करमाणे सबले ॥ १३ ॥

जानार लिंगा (४) गणक ही आज्ञा बिना लिया और (५) सन्मुख लाकर दिया यह पांच दाय
 गक्त आहार धार्मिक भोगने तो सब दोग लगे ॥ ६ ॥ बारम्बार नमोकारभी आदि तप तथा विगय
 आदि के प्रत्याख्यान का भोग को अन्ननादि योगवत्ता सफल दोग लगे ॥ ७ ॥ दीक्षा भिये पाद छ
 पदिन के अन्तर सम्पन्न का बदला करे तो सब दोग लगे ॥ ८ ॥ एक पदिने के अन्तर तीन लेप
 पानी ७ जगो प्रगान् तीन शक्त गद्दी नाचे के पानी में पाँच देकर चरारे तो सब दोग लगे ॥ ९ ॥
 पदिने में तीव्र गक्त माया के स्थानक लेवन करे अर्थात् दमनबाभी करे ॥ १० ॥ श्रेयोवर जिभकी आस्रा ले
 पान में उगर दो ॥ उत्र के पाँच पाठा आदि भोगने ॥ ११ ॥ प्रकृती अति जानक प्रण, निपत

॥ द्वितीय—दृशा ॥

सयंम आउमतेण भगवथा प्यमक्खाय, इह खलु धरोहिं भगवतोहिं एकवीस सवला
पणसा फयरे खलु धरहिं भगवतोहिं एकवीस सवला पणसा ? इमे खलु धरोहिं
भगवतोहिं एकवीस सवला पणसा तजहा—इत्यकम्म करेमाणे सवला ॥ १ ॥ महुण
पडिसेवेमाणे सवले ॥ २ ॥ राइ मोयण भुजेमाणे सवले ॥ ३ ॥ अहाकम्म

धरो अणुप्यन अम्भू ! धने सुना हे यमवन्धने ऐसा कहा है यह आगे कहेंगे वे स्वयं भगवन्तने
शक्तीन सबस दोष दह है ॐ वन के नाप—१ इतल कथ करे अथात् इत्यादि की कुवेष्टा कर वीथ का
नाप करे तो सबस दोष सगे ॥ १ ॥ वेयून सेवन करे तो सबस दोष सगे ॥ २ ॥ रापि को चारों प्रकार
क आहार आदिह भोगव तो सबस देव सगे ॥ ३ ॥ आषाकर्म—साधु क निर्मेव किया हुआ आहार
आदि भोगदे तो सबस दोष न्ये ॥ ४ ॥ राजपण्ड—बड़ा पराक्रमी आहार भोग पदीरादि भोगदे तो
सबस दोष सगे ॥ ५ ॥ (१) साधु नीमित्त पाव सिया (२) ऊतारा लिया (३) यजत्कार

ॐ ऐम निर्बन्ध यमुप नर सबस (जहव) बन्धन पहने मे उस की घात होती है तमे दुर्कृत सबदे दोष का
नेज बान न भोगव की एत ह्यत दे

यणवा पुष्कभोषणवा फलभोषणवा वीयभोषणवा हगिय भोषणवा
मुजमाणे सबले ॥ १८ ॥ अतो सबच्छरस्स दस उदगलेवे करेमाणे सबले ॥ १९ ॥
अतो सधच्छरस्स दस माइट्टाण करेमाणे सबले ॥ २० ॥ आठट्टियाण सीतोदग
ओघाइएण, हरथेणवा मत्तणवा दन्विण्ण मायेणवा असणवा पाणवा साइमवा साइमवा
पडिग्गाहेत्ता मुंजेमाणे सबले ॥ २१ ॥ एते खलु येरेहि भगवतेहि एकवीस सबला
पसत्ता चियेमी ॥ थिसिया दसा सम्मच ॥ २ ॥ * * *

का, * भीज का और १० हरित काय का मोमन करे ॥ १८ ॥ एक वर्ष में दश पानी के लेप लगवे
अर्थात् दश वक्त नदी नाले के पानी में पविदे उत्तरे ॥ १९ ॥ एक महीन में दश माया के स्यान
भेदन करे दश वक्त दगल बाजी करे ॥ २० ॥ और जानकर सविष पानी से या सविष द्रव्य से
हाथ पाँव कुदछी-चाटू भरतन भरा हुवा हो उस में ल अशनदि आहार देता हो उसे ग्रहण कर
माणे तो मद्यस्स दोष लगे ॥ २१ ॥ यों निश्चय भरो बम्भू ' स्थविर भगवतन इक्कीस प्रकार के सबल
(मद्य) दापों करे हैं भगवत्त सेमुन। जैसा तेरे से कहा ॥ इति दशा शुस्सकंथ की दूसरी दशा समाप्त ॥ २ ॥

शाउटियाए जाँव गाराण गिण्डमाण सचल ॥ १४ ॥ आउटियाए अणतरहियाए
 रुदरिण ट्ठुणया सखंया निर्माहियया चेतमाणे सचल ॥ १५ ॥ एव ससजिह्याए
 पुदरिण एयं ससरक्खाए पुदरिण ॥ १६ ॥ एव आउटियाए
 बिचंमत्ताए सिताए बिचमंताएल्लूए कोलवास सिगा दाए जिव पद्दहिण
 सअडे सपाण तथीए सहरीए सउरमे सउत्तिगे पणग दग मट्टिय मक्कड संसाणए
 तहण्णगारं ट्ठुणया सित्रया निनिहियवा चेतमाणे सचले ॥ १७ ॥ आउटियाए
 मूलमोपणवा कदमोपणवा खंघमोपणवा, तया मोपणवा पयालमायणवा, पचमो

वीर की पात करे ॥ १२ आहुर्दो-यूठ खोब ॥ १३ ॥ आहुर्दो बरख दानले खोरी करे ॥ १४ ॥
 आहुर्दो मंतर राखि सविष पृच्छी पर सख्याय कर बैठे नयन करे ॥ १५ ॥ ऐस हा सविष पानी से
 पीन्नी व सविष रत्न स मयी पृच्छी पर बैठे शपकर व मग्गाय करे ॥ १६ ॥ ऐस ही नालकर सविष सिखा
 पर सविष कहर पर मरे दुबे मक्कट पर, ज बों का मग हुवा पिन्नी आदि के भटे सति पीन
 बरख मरिह हरी-वनस्पति, ओमहा पा ी, कीरि के नगे फूलन, कथा पानी, कथा पई, मक्कट-दीपक,
 बहरी के आले, इस प्रकार के स्थानक में स्थाप्य कर बैठे नयन करे ॥ १७ ॥ जानकर—१ मूय का,
 २ बंदहा, ३ सल्ल-पुडाक, ४ तपना-शुलहा, ५ मचास-कुपउ का, ६ पसे का, ७ फूल का, ८ फल

सादना सेहस ॥ ४ ॥ सेहे राइणियस्स सपक्खचिट्ठिचा भवति आसादणा सेहरसा ॥ ५ ॥ सेहे राइणियस्स आसणं चिट्ठिचा भवति आसादणा सेहस ॥ ६ ॥ सेहे राइणियस्स पुरओ निसीइत्ता भवति आसादणा सेहस ॥ ७ ॥ सेहे राइणियस्स पक्ख निसीइत्ता भवति आसादणा सेहस ॥ ८ ॥ सेहे राइणियस्स आसन्न निसी इत्ता भवति आसादणा सेहरस ॥ ९ ॥ सेहे राईणिण सार्द्धं बहिया विधारम्मिवा निक्खत्ते समणे नत्थ पुब्बामन्न सेहेतराए आयामति पच्छा रायणिए आसादणा सेहस्सा ॥ १० ॥ सेहे राइजिण सार्द्धं बहिया विधारम्मिवा निदिस्वत तत्थ पुब्बा

नो शिष्य का भशतना लगे ॥ ४ ॥ जा शिष्य रत्नाधिक गुरु के दोनों तरफ अदकर खडा रहे तो शिष्य को भशतना लगे ॥ ५ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे अदकर खडा रहे तो शिष्य को भशतना लगे ॥ ६ ॥ जा शिष्य रत्नाधिक गुरु के आगे बैठे तो शिष्य को अशतना लगे ॥ ७ ॥ जा शिष्य रत्नाधिक गुरु के दोनों तरफ लगनर पैठे ते शिष्य को अशतना लगे ॥ ८ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे अदकर बैठे तो शिष्य को भशतना लगे ॥ ९ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु के साथ बहिर उच्च [दिशा] गया और एक ही पत्र ले गया हे ! तब शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे चुन्नी करे और फिर गुरु के दो शिष्य को अशतना लगे ॥ १० ॥ रत्नाधिक गुरु के सात पाहर गंधेल मूषि का

॥ तृतीय-दशा ॥

रा०म १३५ तत्र भगवता एव मक्खाय इदं खलु येरहिं भगवतेहिं तेचीस आसा
रा०म १३५ तत्र भगवता एव मक्खाय इदं खलु येरहिं भगवतेहिं तेचीस आसायणाआ पणसाओ,
इदं आ गलु नाआ येरहिं भगवतेहिं तेचीस आसायणाओ पणसाओ तजहा—सेहे
रा०म १३५ तत्र भगवता एव मक्खाय इदं खलु येरहिं भगवतेहिं तेचीस आसायणाओ पणसाओ तजहा—सेहे
रा०म १३५ तत्र भगवता एव मक्खाय इदं खलु येरहिं भगवतेहिं तेचीस आसायणाओ पणसाओ तजहा—सेहे
रा०म १३५ तत्र भगवता एव मक्खाय इदं खलु येरहिं भगवतेहिं तेचीस आसायणाओ पणसाओ तजहा—सेहे

५॥ आयुः नम्यु' धैर्य मुना है मगबने ऐसा करा है यह आग कहेंगे सा तैरीस अश्वतना
६ ॥ र मगबने रही है शिष्य युद्धता है-धरो मगबन् ! किम प्रकार तैरीस अश्वतना मगबने
रहा है' अथ शिष्य' यह आगे रहें। सो तैरीस अश्वतना मगबने कही है उन के नाम-१ ओ
। दत्त रत्नाधिक । मय्य दाम् दाम् भी अधिक पयाय के चारक हों उन के । आगे बसे हों शिष्य को
प्रशानना ७॥ १ ॥ ओ शिष्य रत्नाधिक गुरु के होनों (पायें दाहनी) तरफ लगकर बसे हो शिष्य
को अश्वतना लगनी है ॥ २ ॥ आ शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे लगकर बसे हों शिष्य को अश्वतना
७॥ ३ ॥ यों इस ही अधिक करके आग भी जानना, ओ शिष्य रत्नाधिक गुरु के आगे लडा रहे

सादना सेहस ॥ ४ ॥ सेहे राइणियस्स सपक्खविट्ठिआ भवति आसादणा सेहस ॥ ५ ॥ सेहे राइणियस्स आसण विट्ठिआ भवति आसादणा सेहस ॥ ६ ॥ सेहे राइणियस्स पुरओ निसीइत्ता भवति आसादणा सेहस ॥ ७ ॥ सेहे राइणियस्स पक्ख निसीइत्ता भवति आसादणा सेहस ॥ ८ ॥ सेहे राइणियस्स आसन्न निसी इत्ता भवति आसादणा सेहस ॥ ९ ॥ सेहे राइणिपण सद्धि गहिया विचारभूमिवा निवसते समणे नरथ पुव्वामव सेहेतराप आयामति पच्छा रायणिप आसादणा सेहस्ता ॥ १० ॥ सेहे राइणिप सद्धि गहिया विचारभूमिवा विहार भूमिवा निर्दिखत तत्थ पुव्वा

नो शिष्य का प्रशानना लगे ॥ ४ ॥ जा गृह्य रत्नाधिक गुरु के दोनों तरफ बहकर खड़ा रहे ता शिष्य को प्रशानना लगे ॥ ५ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे बहकर खड़ा रहे तो शिष्य को प्रशानना लगे ॥ ६ ॥ जा शिष्य रत्नाधिक गुरु के आगे बैठे तो शिष्य को अशानना लगे ॥ ७ ॥ जा शिष्य रत्नाधिक गुरु के दोनों तरफ लगकर बैठे ते शिष्य को अशानना लगे ॥ ८ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे बहकर बैठे तो शिष्य को प्रशानना लगे ॥ ९ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु के साथ बाहर बैठे [शिष्य] गया और एक ही पत्र ले गया है ! तब शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे बैठे को और फिर गुरु को शिष्य को अशानना लगे ॥ १० ॥ रत्नाधिक गुरु के साथ बाहर बैठे लगे मूढ का

४ पडिगादिचा पुव्यामेव सेहतरागरस पडिदसेति पच्छा रायणियस्स असायणा-
सेहस्ता ॥ १५ ॥ सेह रायणीयस्स असणत्ता ४ पडिगाहिता त पुव्यामेव सेहतराग
उवणिमतेति आसायणा सेहस्त ॥ १६ ॥ सेहे रावणिण सच्चि असणवा ४ पडि-
गाहिचा त रावणिय अणपुच्छिचा जस्स २ इच्छति तस्स २ खच्च दलयति आसा-
वणा सेहस्त ॥ १७ ॥ सेहे रावणिणसच्चि असणवा ४, आहारेमाणे, तत्थ सेहे खच्च-
खच्च ढाअढाअ रसिय रसिय उसट २ मणुअ २ मणाम २ निद्ध २ लुक्ख लुक्ख

ज्ञान लगे ॥ १६ ॥ शिष्य अशनादि चारों आहार बेर कर लाया वह पडिछे तो शिष्यान्तर को बतावे
और फिर रत्नादि गुरु को बतावे तो शिष्य को अज्ञातना लग ॥ १५ ॥ जो शिष्य अशनादि चारों
प्रकार के आहार ग्रहण करके लाया वह प्रथम छोटे साधु को आपमंथन करे फिर गुरु को आपमंथन करे तो
अज्ञातना लगे ॥ १६ ॥ शिष्य रत्नादि गुरु के साथ अशनादि चारों प्रकार का आहार लाया उसे
रत्नादि गुरुका पूछ बिना जो २ साधु उसमें से आहार ग्रहण करने की इच्छा करे उस २ साधु को अल्पी
जल्दी देने लगे शिष्य को अज्ञातना लग ॥ १७ ॥ जो साधु रत्नाधिक गुरु के साथ एक घंटा एक पात्र में
आहार करता हुआ तब शिष्य जल्दी २ अन्धा २ रसयुक्त २ वर्ण गंधादि उपवेश बनाए २ भावे प्रीति २

राइणियरस कहकहेमाणस्स इति एव वत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥ २५ ॥
 सेहे राइजिय कहकहेमाणस्स णा समरभित्तिवत्ता भवति आसादणा सेहस्स ॥ २६ ॥
 सेहे राइजियरस कहकहेमाणस्स नो सुमणासु भवति आसादणा सेहस्स ॥ २७ ॥
 सेहे राइजियरस कहकहेमाणस्स परिसभेता भवति आसादणा सेहस्स ॥ २८ ॥
 सेहे राइजियस्स कहकहेमाणस्स कह अच्छिदिता भवति आसादणा सेहस्स ॥ २९ ॥
 सेहे राइजियस्स कहकहेमाणस्स तीसे परिसाए अणुट्ठिताए अभिजाए अवोच्छिजाए

साम होगा इत्यादि करे तो शिष्य को अज्ञातना छोड़े ॥ २४ ॥ रत्नाधिक गुरु व्याख्यान देते
 इदं नित भूज जावे तो शिष्य करे कि यह ऐसे नहीं दे ऐसे कहो, तो शिष्य को अज्ञातना छोड़े ॥ २५ ॥
 रत्नाधिक गुरु कया कावे हुवे भूल जाये तो शिष्य करे कि कया इतना भी तुम पाद नहीं रहता है ? वे
 शिष्य को अज्ञातना छोड़े ॥ २६ ॥ शिष्य गुरु क व्यख्यान की प्रशंसा नहीं करे तथा गुरु की प्रशंसा
 पुनकर नाराज होवे तो शिष्य को अज्ञातना छोड़े ॥ २७ ॥ शिष्य गुरु की परिपदा में भेद (फूट)
 हावे, यह शर्मा परिपद और यह गुरु की, तो शिष्य को अज्ञातना छोड़े ॥ २८ ॥ गुरु व्याख्यान देते हुवे
 शिष्य कया का छेदन कर परिपदा का मन भंग करे वा शिष्य को अज्ञातना छोड़े ॥ २९ ॥ शिष्य, रत्नाधिक
 गुरु व्याख्यान दिये पाद यह परिपदा सही नहीं, बिल्ली नहीं, बारिर् नहीं, उस ही परिपदा में

आहोरेखा भवति आसादणा सेहस्स ॥ १८ ॥ सेहे राइणियस्स वाहरमाणस्स
अपडिसणिच्चा भवति आसायणासेहस्स ॥ १९ ॥ सेहे राइणियस्स वाहरमाणस्स
तथ्यगतेधेव पडिसुणिच्चा भवति आसादणासेहस्स ॥ २० ॥ सेह राइणिय किर्छावणा
भवति आसादणासेहस्स ॥ २१ ॥ सेहे राइणीय तुम निवता भवति, आसादणासेहस्स
॥ २२ ॥ सेहे राइणिय खद खद वत्ता भवति, आसादणासेहस्स ॥ २३ ॥ सेह
राइणिय तज्जाएण तज्जाय पडिभणित्ता भवति आसादणासेहस्स ॥ २४ ॥ सेह-

चिक्कना ३ तथा सुत्ता २ सच्च आदि आप योगे और बुरा गुरु को दे दो शिष्य को अज्ञातना लग ॥ १८ ॥
शिष्य को रत्नाधिक गुरु किसी कार्यर्थ बोलवे इन का वचन सुना अतनुना करे हो शिष्य को
अज्ञातना लगे ॥ १९ ॥ शिष्य को रत्नाधिक गुरु बोलवे और वर चन का वचन अपने आसन पर बैठा
हुवा ही मुने लडा होकर मत्पुत्तर न दवे हो शिष्य का अज्ञातना लगे ॥ २० ॥ शिष्य को रत्नाधिक गुरु ने
बाल्या हुवा करे की, क्या करते हो ? हो शिष्य को अज्ञातना लगे ॥ २१ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु का
तूकार से बोलवे ता शिष्य को अज्ञातना लग ॥ २२ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु के स-पुत्र क्रोध मे
मज्जसित हुवा मसवा २ पाले ता शिष्य को अज्ञातना लगे, ॥ २३ ॥ शिष्य रत्नाधिक
गुरु को चन ॥ २४ ॥ हुवा ही वचन पीछा करे, अर्थात् गुरु करे अहो आर्य ? गत्यानी
तपस्वा आदि की पैयाइय करेगा तो तुझे साथ होगा, सब शिष्य पीछा करे कि तुप कोगे हो तुमे भी

॥ चतुर्थ-दशा ॥

सुयमे आटस तेज भगवया एव मस्साय, इह खलु घेरेहि भगवतेहि अटुविहा गणिसपदा पणत्ता, कयरा खलु घेरेहि भगवतेहि अटुविहा गणिसपदा पणत्ता ? इमा खलु घेरेहि भगवतेहि अटुविहा गणि संपदा पणत्ता, तजहा-आधारसपदा, सुयसपदा, सरीर सपदा, वयण सपदा, वायणा सपदा, भतिसपदा, प्ययोग सपदा, सगह परिणापणाम अटुमा ॥ १ ॥ से किं त आधार सपदा ? आधार सपदा, चउव्विहा

अहो आयुप्पन मम्भू ! सुनो भगवतेने रेमा कहा है यह विषय स्पष्टिरे भगवतेने गणि सपदाय के मालक आचार्य भगवत की भाठ प्रकार की सम्पदा [कदि] कही, शिष्य पूछता है स्वयंसे मनपतन आचार्य की भाठ सम्पदा कीन्ती कही है ? अहो शिष्य यह आगे कहेंगे वे आठ सम्पदा आचार्य की कही है उन के नाय—१ आधार सम्पदा २ श्रुत ज्ञान की सम्पदा, ३ धरीर संपदा, ४ इचन [बोझने] की सम्पदा, ५ वाचन [पढ़ने] की सम्पदा, ६ मति पुदि की सम्पदा, ७ सम्पयोग सपती वस्तु का योग मिलाने की सम्पदा, और ८ संग्रह सम्पदा योग शिष्य सेनादि का संग्रह करे आगे इन का विस्तार कहत है ॥ १ ॥ अहा भगवन' आधार सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! आधार मस्पदा के चार भेद कहे हैं उन के नाय—१ सतरा प्रकारके

अवोगच्छाणु दुष्परि तच्चणि तामय कहेकईया मयति आसायणा सेहस्स ॥ ३० ॥
 सेहे राइणियस्स सिज्जासयारग पाणसबडिंसा हत्थेण अणुण्णवेसा गच्छति आसा-
 दणा सेहरस ॥ ३१ ॥ भेहे राइणियस्स सिज्जासयाए चिट्ठुचावा निसीइचावा तुयट्ठाश
 मयति आसादणा सहस ॥ ३२ ॥ लेहरायुभियस्स उच्चासर्णसिवा समासणसिवा
 चिट्ठुचावा निसीइचावा, तुयट्ठितावा मयति आसादणा सेहस्स ॥ ३३ ॥ एताआ
 खलु ताओ धेरेहि भगवत्तेहि सेलीसं आसायणाओ पण्णसाओ ॥ चिबेमि ॥
 सत्थाय दत्ता सम्मत्ता ॥ ३४ ॥

गुरु का दिवा दूध राख्यान दुधरी बकरीसरी बक बिस्स र स को अघनी धीरताई बसाने हो शिष्य को बडाठना
 का ॥ ३० ॥ शिष्य रत्नादि गुरु के पीछने को पाट पाटले को पाव लग लोहे सब हाथ कर लम
 बिछाने को बिना संमारे गुरु को बिना ईदना दिवे आगे बादे तो शिष्य को अडाठना लग ॥ ३१ ॥ शिष्य
 गुरु क बिछाने पर लडा रहे बैठे, बचन करे, सम्या बौद्धा पसरे, तो अडाठना लग ॥ ३२ ॥ शिष्य
 रत्नापिक गुरु से ऊचे बामन या पराभर भासन से सदा रहे बैठे बचन करे तो शिष्य को
 अडाठना लग ॥ ३३ ॥ यों निमय स्वधिर योगबतने एक तैसीस अडाठना करी बैसी ही मैने तेरे से
 कही ॥ शरि दया शुभस्कन्ध सूत्र की तृतीय दया संपूर्णम् ॥ ३४ ॥

मे किंतु सरीर सपया ? सरीर घटविविहा पक्षत्ता तजह — आरोह परिणाह सयतेयावि
भवति, अणोतप्य सरीरे, थिरसघायणे, बहुपडिपुन क्षदियावि भवति, सेच सरीर
सपदा ॥ ३ ॥ ४ ॥ से किंतु वयण सपदा ? वयण सपदा वटविविह पणत्ता
तजह — भविष्यणेयावि भवति, महुरवयणेयावि भवति अणिसिय वयणेयावि

॥ १ ॥ ३ ॥ यदो भगवन् ! शरीर सम्पदा किसे करते हैं ? अहा शिष्य ! शरीर सम्पदा के चार
पेद के हैं, तपया—१ अरोह शरीर का दीप—(सम्पदा) और पण्डित चौहा पना, सुबोमित
गोरे, तेमे ही तजहो दित्य शरीर व धारक होते, २ भलज्जिव शरीर होते अथात अगोपागकी हीनता
भवदसणादि दोग जिग कर छज्जिन होना पडे, एने शरीर रहित, पूण अगोपागी उत्तम ससणेपित
शरीर होते, ३ स्थिर भवगन, यन्तिष्ट पुर परिपरा से चक्षित न होये एवा स्थिर शरीरी होते और ४ बहु
प्रतिपुर्न सामुत्तिह शास्त्रानुसार ओत दि पांचो इन्द्रिय के धारक होते यद शरीर सम्पदा ॥ ३ ॥ ४ ॥
महा भग न ! वचन सम्पदा निते करते हैं ? अहा शिष्य ! वचन सम्पदा के चार भेद का हैं,
यथा—१ आदेश वचन वाला होवे अर्थस्-उत्तरा कहा हुआ वचन सब लोग प्रमान करें, २ मिष्ट वचन
एथात १२ दुक १२८ न कहें ता भी अन्य १० ऐष्ट दो परेणमे ऐसी पुच्छिने बोलें वाले तथा मज्जुलगरीर घोषी होते
३ पणि श्रव वचना अपत्तु राग दप पक्षपात सुभाषद सोरित निरापेक्षा वचन बोडनरान्ति होते और

उगममति सपदा छविहा पणप्ता तज्ज्ञा-खिण्डगिण्डति, बहुगिण्डति,
यहुनिह उगिण्डति, धुव उगिण्डति, अनिरिसय उगिण्डति, असदिहं
उगिण्डति, सेंत उगमहमति ॥ ८ ॥ एव इहामतिवि ॥ एव अवाय मतिवि ॥ ९ ॥
से किं त धारणामति ? धारणामति छविहा पणप्ता तज्ज्ञा-बहुधारेति, बहुविहं

॥ ७ ॥ अहा भगवन् ! भगवन् मति सम्पदा किसे करते हैं ! अहो शिष्य ! अवग्रह मति
सम्पदा के छ भेद कहे हैं तद्यथा—१ शब्दादि पाँचों इन्द्रिय और मन के त्वय के इन्द्रिय गत होते हैं।
तत्कालग्रहण कर लेवे परतु विद्यम्य न लगाव, २ एक हा वक्त में बहुत शब्द रूप गय रस स्पर्श और भाव को
अलग २ ग्रहण कर लेवे ३ अनक प्रकार के शब्द अनेक प्रकार के रूप इत्यादि छे ही का मिश्र २ प्रकार से
ग्रहण कर लेवे, ४ ध्रुवता से ग्रहण करे बयात् ग्रहण किया शब्दादि विस्मरण न हो ऐसे निश्चय ग्रहण करे,
५ अनिश्रित ग्रहण करे अर्थात् किसी पुस्तकादि या वचमादि की आपत्ता से ग्रहण करने की आवश्यकता
नहीं, परतु अपनी इन्द्रियों की शक्ति से ही उसे ग्रहण कर, और ६ असदिग्य अर्थात् संदेह रहित
ग्रहण करे ॥ ८ ॥ निम प्रकार यह अग्रह सामान्य प्रकार से ग्रहण करने के छ भेद कहे ऐसे ही
इहा विद्वेग प्रकार विचार करने की सम्पदा के भी छ भेद कहना और इस ही प्रकार अवाय निणय
निधाय करने की सम्पदा के भी छ भेद कहना ॥ ९ ॥ अहो भगवन् ! धारण मति सम्पदा किसे करते हैं ! अहा

भवति, फुटवयणायावि भवति, सेतु वयण संपदा ॥ ४ ॥ ५ ॥ से किं त वयण संपदा ? वायण संपदा चठन्निहा यण्णा तजहा—विजय ठदिसति, विजयवापुति, परिनिवशवियं वापुति, अत्थणिज्जवण्यावि भवति । सेतु वायण संपदा ॥ ५ ॥ ६ ॥ से किं त माति संपदा ? मति संपदा चठन्निहा यण्णा तजहा—उगगहमति संपदा, इहाममति संपदा, अशायमति संपदा, धारणामति संपदा ॥ ७ ॥ से किं त उगगहमति संपदा ?

४ स्फुट तुष्टे सुब्द बोल जिस में बला भी लणस जाय ऐसे संज्ञय रहित बचनोच्चार करनेवाले शब्दे ॥ या बचन ममादा ॥ ४ ॥ ५ ॥ अहो मगबन् ! बाचन सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! बाचन सम्पदा के चार भेद कहें । उन के नाम— १ ज्ञान ग्रहण करनेवाले पाप (शिष्य) की योग्यता देख उस प्रमाने उस बाचना देव, २ जा पढ़ावे वहाँ पूर्ण निर्दिष्ट करे तुझसे के साथ बाचना देवे पूर्णता मे निर्भेद होवे तब आगे बसावे, ३ सर्व प्रकार के भेदानुभेद दर्शावे, और ४ अर्थ की पूर्वापर संगति सम्पास न संपादन-मिसाप कर पाचना देवे ॥ यह पाचना सम्पदा ॥ ५ ॥ ६ ॥ अहो मगबन् ! मति सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! मति सम्पदा के चार भेद कहें । सद्यः—१ अवग्रह मति सम्पदा, २ ईश मति सम्पदा, ३ अबाय मति सम्पदा, और ४ धारणा मति सम्पदा

वर्युविहायवाद पठजिचा भवति, ॥ सेत पठगमतिसपदा ॥ ७ ॥ ११ ॥ से किं त
 सगह परिणा सपदा ? सगह परिणा सपदा ? चठन्विहा पणत्ता तजह'—बहुजण
 पाउगताण वासावाससुखिच पडेलदिचा भवति, बहुजण पाउयत्ताए पाडिहारिय
 भेजा सथारय उगिण्हिता भवति, कालेणकाल : समाणइचा भवति, आहागुरु

बादी किस प्रकार का है अल्पस है कि विश्वेष है छात स्वभावी है कि क्वाथी है इस से बाद चर्चा करनेमें कुछ सर निकलेगा कि नहीं निकलेगा, योंन्य सेच काल पाथ स्वात्मा परात्मा का तथा उपकार अ नुरकार का विचार कर बाद करे ॥ यह प्रयोग सम्पदा के भेद हवे ॥७॥ १॥ अशो भगवन्! सग्रह परिणाम सम्पदा किसे कहते हैं? अशो क्षिप्य ! सग्रह परिणाम सम्पदा के चार भेद कहें हैं, तथया—बहुत माधुओं क्या क्रतु के चार फीने जिस स्थान में सख से रहकर अपना काल व्यतीत कर सके तथा ग्वानी रोगी तपस्वी नव वीसित अदि साधुओं को आहर पाना शस्त्र को साता उपसे ये न क्षेत्रों सोमावे कलिये जो होवे उन का प्रतिवेत्ती शक्ति, रबहुन साधुओं तथा गुरु ग्यानी रोगी तपस्वी के योग्य स्थानक पाट पाटल बिछोना परालादि पाटी, हारिय चसु को ग्रहण कर भग्रह कर रवे कि बहुतोस में किसी को अहचन नहीं पटे ३ जिस २ काल में जो २ प्रफया अनुष्ठान करने का हो उस २ काल में वही करे जिस से अन्य साधुओं भी कुम्हय पपायन बने और ४ आगाय प, प्राप्ता का अभिमान नहीं करते हुये जा गुरु प्रादि

धारति पुराण धारति बुद्धर धारति, अणि, भिय धारति अमरिद्धं धारति॥ सेच धारणा॥ सेच
मतिमपदा॥ ६११०॥ से कित पठम सपदा? पठमसपदा पठजिह्वा पणप्ता सजहा मायविहा
यवाद् पठजिह्वा मवति परसविहायवाद् पठजिह्वा मवति सेचविहायवाद् पठजिह्वा मवति

शिष्य 'पाप्मा यति सम्मदा क भी ६ भेद कह है वय्या—' एक ही शक्त में बहुत प्रकार के शब्दादि
पाप्म कर। से २ उन शब्दादि को भेद माय संहित पारन कर रले, १ बहुत काल तक ध्यान कर रले जब
पूजे तब कह १ दुःख कोठिन शब्द अथ सो पारन करना सामान्य जन को दुष्कर हो उस से सहाये पार रले,
५ पुस्तकादि किभी की भी नेत्राय विना हाथे फाड़ कर केंद्रस्य पार रले, और ६ असौदग्य सद्य विषय
रहित तुलाना से पार रले यः पारणा सम्मदा के ६ भेद और यह यति सम्मदा के चार मूल भेद तथा २५
वपर भेद हुये ॥ ५॥ १०॥ अथा योगन १ योग सम्मदा क कितने भेद कहे है? महा शिष्य ।
त्रयोद सम्मदा के चार प्रकार कहे हैं—' १ यपनी आत्मा की शक्ति देल कर परके साथ संवाद (बर्षों)
कहे, २ ओ प्रति पनी है उस की शक्ति को बुद्धि को दलकर उन के साथ संवाद कर ३ क्षेत्र का देखे
कि इस क्षेत्र में स्वप्नों प्रबल है को प्रति पनी प्रबल है फिर संवाद करे और ४ वस्तु देखकर विचार
मनुने प्रमाण पदा के राशा भाषत्य मुर्द साह किउ पर्यं के भाग है कहावही है कि न्याय पक्षी है नया यति

संजम सामायारियावै भवति, तत्र सामायारीयात्रि भवति, गण समाधारीयावि भवति, पुरगलविद्धार सामायारियात्रि भवति, सेच कायार विणए ॥ १४ ॥ से किं त सुय विणए ? सुर्याविणए च्छाब्बिहे पण्णसे तज्झा—सुतवाएति, अत्थवाएति, द्वियवाएति,

साधु की प्रतिष्ठादि सब विधी युक्त आप करें अन्य के पस विधि युक्त करावे, १ गण समाचारी-साधुओं के समुह में मित्रता लाने योग्य के पास मित्रता पढ़ावे, वैराग्य करने योग्य के पास वैराग्यचक्रगाथे, वाचना देने योग्य के पास वाचना दिखावे वगैरे गया उचित जिस से भी काय हो सके वह उस के पान कराव और यथा उचित आदर भी करे, और ४ एकलविहार समाचारी-द्रव मधयण, मवल वैराग्य, सूत्र निधी, समसारी, परिषद से मवल-इत्यादि गुन संग्रह होवे वह अकेला विमरना इच्छता होती तब अकेला विहार कराव कदाचित् स्व एकल विहारी हान। वहावे तो योग्य साधु को अपन स्थान स्थापन कर आप भी एकलविहारी बने यह आचार विनय के चार भेद हुये ॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! सुतविनय कित्ते करते हैं ! अहो भिष्य ! सुत विनय के चार भेद कहे ठथया—१ सूत्र आप पढ़े अन्य का पढ़ावे, २ अर्थ आप पढ़े अन्य को पढ़ावे, ३ इस लोक परलोक तथा उभय लोक के शिव का कार्य आप कर अन्य के पास करावे और ४ शिष्य के योग्यता देखकर ज्ञान में परगाभी

विणए घउविहएणणे तेजहा कुइस्स कोह विणएवा भवति, दुट्टस्स दोस णिनिष्णिहा भवति कखियरम कख छिविचा भवति, आयासुप्पणिद्धेयात्रि भवति॥से त दोस निग्घायणा विणए ॥१७॥ तस्सेवं गुण जासीयरस अतेवासिस्स इमा चउविहहा विणयपडिउप्पी भवति भजहा उवगरण, उण्यायणा, साद्धिहसा, वण्णसंजलता, भार पघोरुहणता ॥१८॥ से

बिनय किभे करते हैं ! महा शिष्य ! दोष निर्यात बिनय के चार भेद करे हैं तथया—१ जो कोई मायु किभी कारण से क्रोधित बना हो तो उसे बिष्ट बचन कर प्रतीतकारी बचन कर सर्वोपे २ जो कोई दुष्ट अकृत कानेवाला हो उसे प्रथमं से दुर्गेति आदे के दुःख बगकर समझाकर मायु धियन दकर अद्भुत करे ३ स्वस्वभावे अन्य वस्तुओं के हंग धर्तिग देखकर उम मत का कांया अमि सापा बना हो तो उसे जैन सिद्धांत का गुण समझ कर उस की अन्य मत की कांशा का छेदन करे और ४ सायं की भालम बदाचित् मोह मद के उदय स विपरजति में परिणये तो मोह मद वृद्धि का वर्तव्य का वारिस्थाग कर अपनी आत्मा को सुप्रगति में स्थापन कर यह दोष निर्यात बिनय ॥ ६॥ १७॥ यह जो आठ सम्पदा के १२ भेद, और चार प्रकार के बिनय यों १६ गुण सपख आचार्य के जो अंतैगामी (शिष्य) हैं उन को चार प्रकार की बिनय की प्रतिवृत्ति प्रगीकार करना उन के नाम—१ उपकरणों की उत्पत्ति करे, २ यथोचित सायवा करे, ३ वर्ण संग्रह सगदमून

निसस चाएति, सच्च सुधिबिणए ॥ १५ ॥ से किं त विक्खेवणा विणए ? विक्खेवणा
 विणए भवविहे पणत्ते सअहा—अदिट्ठ वाएति, दिट्ठ पुव्वगत्ताए विणएत्ता भवति,
 दिट्ठपुव्वग साहुस्मियत्ताए विणएत्ता भवति, दिट्ठपुव्वग सहेतु धम्माओ धम्मेद्वयइत्ता
 भवति, तस्सेव धम्मस्स हियाए सुहाए समाए निस्सेसाए अणुगाभियताए अम्भुट्ठत्ता भवति,
 सेच्च विक्खेवणा विणए ॥ १६ ॥ से किं तं दोस निग्घयणा विजय? दोसनिग्घायणा
 बनोरे न्ह सुन विनय इमा ॥ २२ ॥ १५ ॥ अहो यमवन् ! विस्सन्ता विनय किंसे कहते हैं ? अहो विव्व !
 विस्सपत्ता विनय के चार येद कोरे हैं, तयणा भवही मर्यात्त मिध्यास्त्री बीरों को हैं उन को अपने इणीगत
 हुआ सम्पद प्रकार पाठ किया सब का स्वरूप मोठोचोप कर सुइणीवत्त-सम्पद इणी बनावे,
 सुइणीवत्त सम्पद इणी जीव है २ उन को जाना स्वीकार किया हुआ यह महाप्रत रूप धर्म
 बना कर सापूर्णि बनावे संपन्न धर्म में स्थापन करे ३ जो धर्मप्युत्त इये अयत्त पदवाइ बने
 अयत्ता पदमे जेमे है उन को जानादे की यथा उचित सहायता कर पुन धर्म स्थापन करे द्रव बनावे
 और ४ विन मण्डित धर्म सब जीवों के हित का सुख का दीया का निस्तारकस्य ण का कर्ता अनुगायिक
 परंपर में भी सय बाधे एमा है में आप सावधान रावे और अन्य अनेक नीयों का साव-
 धान इन कर धर्म की पृष्टि करे ॥ यह भिसेपत्ता चिन्तय हुआ ॥ ३ ॥ १६ ॥ अहो यमवन् ! दाप निर्घोह

तजहा अणुलोमवद् सदितेषां भवति, अणुलोम काय किरियत्ता, पडिरूव काय सफासण्या, सवस्थेसु अयडिलोमया, सेतं सादिल्लया ॥ २० ॥ से किं त वणस जलणता ? वणसजलणता चउडिविहा पणत्ता तजहा आहातघाण वणणवाइ भवति, अणुगगइ पडिहणिचा भवति, यणणवाइ अणुयुत्तिचा भवति, आयावुसुसेवया भवति

चार भेद के हैं तथया—१ अनुलोम वचनी होवे, मयत् गुरु शिष्य हो किसी प्रकार का वचनोद्देश करे तब शिष्य बड़े कि तर्ज वचन आप कहते हो तैसा ही हे यों गुरु के वचन के बहुत मान पूर्वक श्रद्धान करे, २ अनुलोम कर्पा करे अर्थात् गुरु आदि जो कार्य बतावे वही कार्य उनकी सवीप प्राप्त हो विसा भवनी काया कर निपत्रादि ३ प्रतिकल्प कार्य स्पर्शक भर्थात् प्रतिकल्प कार्य जिस को जितना स्वये, उतना उन का कार्य करे योग्यता प्रमाने तब की सेवा भक्ति करे और ४ सर्व अथ में अग्रनिर्लोभे होर अर्थत् मय का अच्छा लगे ऐसी प्रवृत्ति से प्रवर्ते, सर्व कार्य सयमी के संचित करे किसी संयम के या सयमी के साथ में प्रसाद नहीं करे ॥ यह सहाय्यता निनया ७ ॥ २० ॥ अहो भगवन् ! वर्ण संज्वलन क्रिते करते हैं ? अहो शिष्य वर्ण संज्वलन के चार भेद करे हैं तथया—१ यथा तथ्य वर्णन करे अर्थत् जो भानार्थादि हैं, उन की वचम जाति कुल ज्ञान तथा गंभीर्यतादि गुण हो उन का पूर्णवने प्रकाश करे ठिया नहीं तैस ही भ-वोक्ति भी लगाने नहीं २ अयर्णवाद का हरण करनेवाला श्रवे अर्थात् जो कोई

किं त उत्रगरण उपपायणया ? उत्रगरण उपपायणया चतुर्विहः पण्णसा तंजहा अणुप्य
 साइ उत्रगरणइं उपपाइत्ता भवति, पोरानाइ उत्रगरणाइ सारविक्षत्ता भवति, सगोविच्चा
 भवति, परिच जाणिच्चा पण्णुद्धरिच्चा भवति, आहाविद्धि समाइत्ता भवति, से तं
 उत्रगरण उपपायणया ॥ १९ ॥ से किं त साइछिणा ? साइछिणा चठव्विहा पण्णत्ता

गुणानुवाद कीर्ति करे और ४ गच्छ का मार उस पर आरोपन करे अर्थात् गच्छ नायक भाषाय
 बनावे ॥ १८ ॥ अहो यमबन्धु ! उत्रगरण उत्थातन किसे करते हैं ? अहो क्षिप्य ! उत्रगरण उत्थातन के
 चार भद्र कह सपया—१ जो पया उचित सपते पुरे वल पायादि प्रथम प्राप्ती नहीं हुई हो उन उत्रगरणों
 की प्रवृत्ति गयेपया कर शुद्ध प्राप्ति करे क्योंकि कि भाषाय तो वाचना यथोपदेशादि कार्य में रहते हैं इस
 क्षिप्य ब्रह्मास्त उदकरण को प्राप्त करना यह क्षिप्य का ही कृतव्य है, २ जो प्रथम के याचना किय पुवे
 उदकरण है, यद्यपि वे जीव वर्षाय को प्राप्त पुवे हैं तथापि वे बने बहा तक प्रयत्न पूर्वक रक्षण कर
 रखले योग्य काष्ठ में उन की भोगदे, ३ जो अल्प उदकरण पारक कोई साधु देशान्तर से आया हो
 या अपने नमीक का हो यह अल्प उपाधी कर सिद्धता हो धर्म करता हो तो उस यथाचित सपाधि
 देकर सहाय करे और ४ यथाविधि उपकरण कर तथा क्षिप्यादि परिवार का समाखेनाका होवे, यह
 उत्रगरण उत्थातन विनय ॥ १७ ॥ अहो भगवन् ! सहायता किसे करते हैं ? अहो क्षिप्य ! सहायता के

उत्समणता० सया(मि)य अम्भूटिता भवति, कहच साहस्रिया अप्पसदा अप्पसदा,
अप्यकलदा अप्यकसाया, अप्तुप्तुमा सेंजमयहुला, सवरबहुला, समाहियहुला,
अप्यसत्त मयान तन्मा अप्याय मावेमाणण एवं वण्णाविहग्जा, सेत्त भारपधोरुहणता
॥ २२ ॥ ० । वलु थरेहिं मगयनेहिं अट्टविहा गणिसंपदा वण्णचा सिधेमि ॥
चउदेयमा दता सममसा ॥ ४ ॥

जेव्हा उत्तरा द्या हा फूट पडतो तो भी आप ठसे अनिश्चितपणे मरणाव्हि किंसी का भी पस घारन नही करता। पिल्लू केरति ना भय। रतिन पश्यस्य भाय सम्यक् प्रकार कर्तव्य व्यवहार सुतादि ना पश्यस्यस्य का उव भक्तिरत्न लेख क उग्रयावे, परस्पर सहायता करवे इस प्रकार व्यवस्था करतून स्थापन करे। अतिस आग पिक मदव मासत भाव प्रवर्ते ऐसे सम्प के कार्य में व्यवपयत होवे यस कर्त। इस प्रकार कर। तो कि अवधान वधाद रहित होवे वचन के प्रकाट रहित होवे लेख गति होवे तुकार रहित होवे इन लोगों कर राइन मप्रदाय घन और संयम की वृद्धि होवे संवर की वृद्धि होवे भ्रममत्त रहित होवे स्व्य समन्वय के मायु मकर प्रभार सथम चार प्रकार तप करके अपनी आत्मनि हो मावने होवे चिते इन गुणों की वृद्धि होवे ऐसा को यह भार प्रत्याग्रहन चिंतय हुआ ॥ २२ ॥ यह मरि मगवतने आठ प्रकार रा गी गभी गचय की सम्पदा वशी भयो जम्बू ! मैंने जसा महावीर स्वाभी से मुग रली फा ॥ गी २५ शु. रूप सुख की चर्या दशा सभासम् ॥ ६ ॥

आयानुष्ठु सेवया भवति, सेतं वण्णसंजलणता ॥२१॥ से किं स भार पचोरुहणता? भारपचोरुहणता चटाव्वहा पण्णसा तज्झहा असगहिय परजण समहिता भवति, सेह आयारगायर गाहिंसा भवति साहामियरमणिजयसाणरस महायाम वेयावच्च अम्भुट्टिता भवति, सुहाम्मयाण अविकरणाये उप्पणामि तस्य अणारिसतानस्सि उवसिता अस्सलरगाही ॥ मज्झसत्थम व भूते समविबुद्धरमाणे तस्स अधिकरणरस सामणवि

पट्टन कर्षी जीव आचार्य महाराज के अवर्गगात्र बाल चण्डीनें कर जो उसे युक्त कर सङ्घावे अवर्ण पद की विवृति करे, १ जा आचार्य महाराज का गुण नुवाद का तो अच्छा माने, उसे सगेप उच भावे, उस की अनुगोवन करे और ४ भावाय महाराज कर्णित आकार का जान हा आचर्य का कर्षी निपजावे सेवा मार्क कर यह संस्मन वैनय हुआ ॥२१॥ अहा मगबन्तु ! भारपचोरुहणता किसे कहत है? प्रहो गिह्य! भागपचो रोहणता के चार भेद कर हैं वक्ष्या—१ ममप्रोहित जन का मंग्र करे अथ तू जो किसी कारण से पचरा कर कोर वापु वृत्तिका त्याग कर निरुक्त जाता हो उसे वचन से ब्यापी भे या ज्ञानादि कर मंताप कर गण में स्थापन करे, २ शिष्यादि मपु भ्रमण महल को आचार—श्रुत ज्ञानादे का आधार तथा गोचाग मित्रादि का प्रवर्तन इन में कुशल करे दिन शिक्षा देवे ३ अपना स्वर्णम साधु रोग नुषयस्यादि कारण का ग्यानी पाता होवे इन को औपयोग्यचार आहार मति खेवनादि वेगवच करने में तथा धीवत भादर उत्कार करन में सावधान होवे और ४ अपने स्वर्णम साधुओं में परस्पर अधिकरण

सरण भाणियव जाव पुढविसिलावट्टए, सामीसमोसडे पारिसा निग्गया, धम्मोक्खिओ
परिसा वडिगया ॥ ३ ॥ अज्जो। तिसमणे भगव महावीरे समणण समणीणं निग्गया
निग्गधीअय आमतिच्चा एय वयासी-इह खलु अज्जो ! निग्गयाणवा, निग्गधीणवा
इरिया समियण, भासासमियाण, एसणा समियाण, आयाण मढ निक्खेवणा सामियाण,
उच्चार प समण खेळज्जल्ल तिंघाण परिट्टवणिय समियाण, मणत्तामियाण,

यही जित्तएषु नायक राजा राज्य करता था, वसत की वारणी नाम की रानी थी यावत् समे सरण पईत
सर वणन वरगाइ शास्त्रानुसार कहना वगीचे के प्रप्य में ज्याव वर्ण का पृथ्वी तिला घगरा मटारा
सिंहासन के सस्थान से सस्थित अनेक विप्रों स विप्रिय विच को प्रसन्न करता देखने योग्य अभिरूप
मनिरूप था ॥ यही श्रमण भगवत् श्री महावीर स्वामी बोदइ हजार माधु छपीस हजार आर्जिका के
परिवार से परिवारे हुव प्यारे, द्वादश जाति की परिवदा भराइ, भगवत्ने बर्म कथा सुनाइ, परिपदा पीछी
गई ॥ ३ ॥ अहो आर्यो ! इति सम्मोघन कर श्रमण भगवत् श्री महावीर स्वामीने साधुसाध्वी निर्ग्रिय निर्गथनी
का आर्धश्रण दिया बोलाये और यों कहने छगे या निश्चय, अहो आर्यो ! निर्ग्रिय (माधु)
अथवा निर्ग्रथनी (साध्वी) ईर्षो साधिवि कर साधिता, यापा साधिवि कर साधिता, एयणा
समिनि कर साधिता, आदान [ग्रहण करना] मढ (मंडापकरण) निक्षपना (रखना) समिति कर

सर्वधर्म जातिचर ॥ १ ॥ सन्निपाणे वासे असमुपपण पुन्वे समुपजेजा
धई सराभि ॥ २ ॥ सुभिण दसिणे वासे असमुपपणपुन्वे समुपजेजा आहातस
सुभिण पासिचर जाइभरणेणवा से असमुपपण पुन्वे समुपजेजा अप्पगो पोरगिय
जाइवमरिचर ॥ ३ ॥ देव दसणेवा से असमुपपण पुन्वे समुपजेजा
दिव देवाइ दिवं देवजुय दिव देवाणभाव पासिचर ॥ ४ ॥
ओहिणाणे वासे असमुपपण पुव समुपजेजा, ओहिणालाय जातिचर

अरुणी दे इत्यादि चिन्तन में निमग्न हुआ जीव स्वसमय परसमय का ज्ञान हे वे पर समय पूर्वा पर
विराजने और सावध्य (जैन मत) अविरत ज्ञानने से धर्म में चिन्त की स्थिरता बने ॥ १ ॥ मन्त्री
जीवों को रा उत्तरा रावे रा संज्ञी ज्ञान अथात् ज्ञात स्मरण ज्ञान जो प्रयत्न उत्पन्न नहीं हुआ हो ऐसा
उत्पन्न रावे जिन से अपना पूर्णत्व का स्वरूप जान कि मैं असुरकारणी स यः मुख दुःखादि पाया
हूँ, वय मे चित्त की मगधी होने ॥ २ ॥ जिन प्रकार मगधती सूत्र में मगधन श्री मगधीः स भी के
द्वय राम को देसे तथा मुक्ति प्राप्त क सोल राम करे वैसे स्वप्न आ प्रयत्न प्राप्त नहीं हुए हैं ऐसे स्वप्न
प्राप्त होते उस का यथावध्य फल जानकर चित्त में समाधी होने ॥ ३ ॥ देवता के दर्शन पड़े न दुःख होने हो
देने दिव्य प्रधान देवता सम्पत्ती अदि दिव्य प्रधान देवता सम्पत्ती पुनि फाँवी दिव्य प्रधान देवता
मगधी मात्र देवतकर चित्त में समाधी होने ॥ ४ ॥ अवधी ज्ञान जो प्रयत्न नहीं उत्पन्न हुआ हो वह समुपज
भाव जिन से अपन्य अंगुल का असंख्यात्मा माग उत्कृष्ट असंख्यात्मीप समुद्र में रह रही पदार्थों को

तयचित्त समादाय, पृथक्काण पुनवे समुपप्लेजा ॥ धम्मेट्टिउ भविमणो, निव्वाण मभि-
 गच्छति ॥ १ ॥ इमचित्त समादाय, मुज्जेलोय मे जायति ॥ अप्पणो उत्तमट्टाण,
 सम्पणीणाण जाणति ॥ २ ॥ अहातच्चतु सुविण, खिप्पपासति सवुडे ॥ सव्वथा उह
 सय करे जिम से चित्त में समायी होते ॥ १० ॥ यह दृष्ट होळ विच समाया क करे इनका प्राप्ति
 किस प्रकार होती है सा कहते हैं ॥ पर्य का चिन्तन से होते सो कहते हैं—क्रोधदि कपाय कर
 भविन दुःख हृदय ओ पा उसे छाँट दानदि निर्मल मल संपाकर पवित्र बनावे सम्पत्त्व का
 प्रानन करे अर्थात् भिन बचन व मुक्त बचन पर रह श्रद्धा प्रतीत प्रानन करे, आर्त रौद्र स्थान
 का त्याग कर परमस्थान अकृष्यानका स्यावा बने, शत्रु मित्र पर समहृष्टो
 रते मण्डी पुरी वस्तु को रागद्वेष न करे, पुत्रलौ में घृणा व लीनता रहित होव, एकान्त
 परार्थि होने, जो कुछ करे सो सब परमार्थ ही करे रोगोदय में परमार्थ में विभक्त इति
 नहीं बने इस प्रकार जो स्वामी जीव होते, वह इस भव में विच समाधी रूप परम सुख को मुक्तकर
 प्राण निर्माण मोक्ष प्राप्त करते हैं ॥ १ ॥ जाति स्मरण ज्ञान किस को होते सो कहते हैं—जो पूर्व
 जन्म का वत्सल होने का उत्तम स्थान भिक्ष का किसी के करने से व किसी वस्तु के देखने से जानकर
 भिक्ष की समायी पूर्वक वस का विचार करता हुआ जाति स्मरण ज्ञान कर पुनः उस को जाने पूर्व कृत
 दुष्कृत्य का अनुमद होने से समाधी होते ॥ २ ॥ उत्तम स्थान किस को प्राप्त होवे सो कहते हैं

॥ ५ ॥ ओही वंसने वासे असमुप्यण पुढे समुप्यजेजा ओहिणा लोय पासिचए
 ॥ ६ ॥ मण पञ्चवणावासे असमुप्यण पुढे समुप्यजेजा अङ्गुइजेसु दीव समुहेसु
 सण्णीयंविदियाण पञ्चसगाण मणोगएमावे आणिसए ॥ ७ ॥ केवलनानेवासे
 असमुप्यण पुढे समुप्यजेजा केवल कण लोयालोय आणिसए ॥ ८ ॥ कवल वसणेवासे
 असमुप्यण पुढे समुप्यजेजा केवल लोयालोय पासिचए ॥ ९ ॥ केवल मरणेवासे
 असमुप्यण पुढे समुप्यजेजा सव्वदुक्खप्यईणाए ॥ १० ॥ (गाहा)

माने जिस से विष में समापी होवे ॥ ५ ॥ अर्थात् दर्शन पहिले उत्पन्न नहीं हुआ वह उत्पन्न होवे तब
 मे मोह के रूपी पदार्थ को देखे जिस से विष में समापी होवे ॥ ६ ॥ मनः पर्यव दान को प्रथम प्राप्त
 न हुआ हा वह प्राप्त होव जिस से अष्टाद्विप दो समुद्र के अंदर के सद्गी पदेन्द्रिय पर्याप्त क मनोगत
 भाव जाने जिस न विष की समापी होवे ॥ ७ ॥ कंसल ज्ञान प्रथम कदापि उत्पन्न नहीं हुआ वह उत्पन्न
 हाव जिस से सपूर्ण लोकात्मक के द्रव्य सब काळ भाव को माने, जिस से विष में समापी होवे ॥ ८ ॥
 केवल दशन ओ प्रथम समुत्पन्न न हुआ हो वह समुत्पन्न होवे जिस से सम्पूर्ण लोकात्मक को देख, जिस
 मे विष में समापी होवे ॥ ९ ॥ और केवल मृत्यु केवल न युक्त मृत्यु होव सो अथवा फिर नहीं मरना
 पड़े ऐसा पाठित मरण सो कवल मरण प्रथम नहीं मरा ऐसे मरण से मरता हुआ सर्व जन्मदि मृत का

प्राप्त, वैसर्गं परिसुब्रमिति ॥ उक्तं महेश्वर इतिरिष्य, सत्त्व समणुपत्सति ॥ ६ ॥
सुसमाहितलेसरस, अशितकरस भिक्खुणो ॥ सत्त्वमो विष्णुमुक्त्स, आया जाणति

को पाकेत नहीं करे प्राणायाम करे ऐसे रौद्र मय को भी सपथान से सान करे, शुद्ध निर्मल दाय रहित
सर्वप का पालक, वा दृष्टा इतिन तप का करने वाला हो, इत्यादि गुणसमूह को अवधि ज्ञान की प्राप्ति
होती है ॥ ५ ॥ अन्तरि ब्रह्म किन को होरे सो कहते हैं और उक्त गुण सपथ तपस्या कर वात
स्वभावी बना जिसने जिनक कुलज नीक कापोत इन तीनों अनुपलब्ध्या सो नहीं परिणने परंतु वे जो पञ्चमूक
इन तीनों लक्षणा में परिणयने वाले सर्वधी को ब्रह्म अवधी ज्ञान के साथ अवधी दर्शन की भी प्राप्ति
होती है, जिन का वे लक्ष्यलोक ज्यातिपी वेयाभिकादि, अयोलीक नरकादि और भिरिक लोक भस्पात
असत्प्राप्त दीप समुद्रादि सप को सम्पक् प्रकार सदेह रहित प्रगट जानने देखन लग जाता है
॥ ६ ॥ मन पयन ज्ञान किसे होवे सो कहते हैं मो साधु समाधि माह मुक्त हो, वेते ही ब्रह्म लक्ष्य
की परिणोत मुक्त हो, वक्त माह कर रहित हो अर्थात् जिन वषणों में निश्चित होने से रक्षा का
अभाव हुआ हो, निवृत्त भिक्षा से उपजीविका व कर्णों को संतोषित करने वाला, पाप पादे प्रचर का
(१ नो कपाय, २ कपाय, ३ पिष्टपात्र) अभ्युत्तर परिग्रह और ९ प्रकार का (भेष, घर, बादी सुवर्ण,
पन, पाय, द्विपद, अनुप्यद, कुस्थान) पाप परिग्रह का सर्वथा मकरे त्यागी ब्रह्मा सर्व संग रहित

तरति, पुनश्च यत्रि मुच्यते ॥ ३ ॥ पताइ भयमाणस्त, विविष्ट सयणासपं ॥
अप्याहारस्त दंतस्त, देवा दसति तादृणो ॥ ४ ॥ सव्य काम विरतस्त, स्वमतो
मेयभैरवं ॥ तओ से नानाणि भवति, सजयाण तवसिणो ॥ ५ ॥ तवसा अवहदु-

जो साधु सपुत्राणा-संवरवै- गोवे यथावप्य स्वम जो मगवती सूत्र में मुक्ति गवन के सोलह स्वम
कहे हैं उनके कट तथा पक्षीर स्वादी ने दख स्वम देखे रेमा कोई राम भीमवतोसे देखे वर सपुत्री
वनगार सवया प्रकार से भयभरण कप संभार समुद्र को तिरि अन्य मरणादि मर दुःख से मुक्त होवे
॥ ३ ॥ देव दशन किम को होते हैं सो करते हैं-नो साधु प्राप्त हुये आहार वस्त्रादि का तथा अन्त
मान आहार वस्त्रादि को सपमाव मदन बाछे अर्थात् प्राण करने बाछे व सपमाव से भोगवने वाले,
हिमे ही स्त्री पशु व नपुनक भित स्थान में रहते हों वहां नहीं राने वाले वस्त्रवर्य की शुभी के
छिये मरर आहार काने बाछे, अत्य वपाधी के रखने बाछे व दमितन्द्रो अर्थात् इन्द्रियों को विषय पंचमे
बर्नने रोकने व वे और पृथग्यादि छ ही काय भीषों के रसक इत्यादि जो अष्ट गुन के भारक होते हैं उन
को देव दर्शन होने हैं ॥ ४ ॥ भा-अधि ज्ञान किस को होता है वह करते हैं जो साधु सर्व प्रकार
ही कामया कर। वस्तु से भित के वन में किता भी वस्तु मासी की इच्छा न हो, या काम शुद्ध से
इन्द्र और रूप के लपय से बिरक्त हो, देवता पनुष्य विविध संवदी मयंकर परिषद प्राप्त हुए परिणामो

हयाए, ह०मइ तले ॥ एव कर्माणि हुम्मनि, मोहनिजे खय गए ॥ ११ ॥ से
पावति भिणिद्वते, जहा सेना पणरसइ, एव कम्मपणास्सति, मोहनिजे खय गए
॥ १२ ॥ धूमहीणो जहा अग्गि, खीयति से निरघण ॥ एव कर्माणि खीयने,
मोहनिजे खयगए ॥ १३ ॥ सुक्कमूले जहा रुक्खे, सिद्धमाणि रोहिनि ॥ एव
कर्मानेरोहति, मोहनिजे खयगए ॥ १४ ॥ जहा दद्धाज वायाम, न जायति पुण
कुग ॥ कम्मवीएसु, षट्सु न जायति म०कुग ॥ १५ ॥ विद्या ओरात्थिय बोदी नाम

होता है इस ही प्रकार मोहनीय कर्म का नाश होने से सर्व कर्मों का नाश होता है ॥ ११ ॥ जैसे सेना-
विपति का नाश होने से सेना इधर उधर भग जाती है इस ही प्रकार मोहनीय कर्म का नाश होने
से वाक्की के सब कर्म भग जाते हैं ॥ १२ ॥ घृन्न रहित आग्नि इधन के अभाव से क्षय होती है त्यों मोह-
नीय कर्म के अभाव से सब कर्म का क्षय होता है ॥ १३ ॥ जिस प्रकार जिस वृक्ष का मूल सुदृगया हो
वह पानी के सीपने से भी पुनः पल्लवित [सजीवित] नहीं होता है, ऐसे मोहनीय कर्म के क्षय होने से फिर
कोई भी कर्म भङ्ग नहीं पकड़ करते हैं ॥ १४ ॥ जिस प्रकार मूजकर दग्ध किया हुआ बीज [धान्य]
पुनः पानी के सयोग से भी पुनरापि अंकुरोत्पत्ति नहीं कर सकता है इस ही प्रकार कर्म रूप धीज दग्ध
होने से फिर भी वाङ्मर की उत्पत्ति नहीं होती है ॥ १५ ॥ इस प्रकार के केवल ज्ञानी मगर्वत आयुष्य

पञ्च ॥ ७ ॥ अयासेनाणावरण, सत्त्व होति स्वागय ॥ सत्त्वालोभमलोगध,
जिष्णाजाणति केवली ॥ ८ ॥ अया से देसणावरण, सत्त्व होति खयें गर्भे ॥ तमो-
राग मलोगध, जिणो पासति केवली ॥ ९ ॥ पडिमाए विसुद्धाए, मोहणिल्ले खय
गए ॥ असेसं लोगमलोगं, पासति सुसमाहिण ॥ १० ॥ जहाय मण्डय सुईय-

इत्यादि गुरु हरि पृक्त होता है वह आत्पर्यव [पनोगत मान] जानने वाला मन पब ज्ञान का धारक
होता है ॥ ७ ॥ प्र फल ज्ञान की प्राप्ति कैसे हो सो बताते हैं—जिन साधु का ज्ञानावरणिय कम सर्वथा
खय होग व केवल ज्ञान की प्राप्त करके भिन्नेतर हा कर संपूण लोक और अलोक को केवल ज्ञान कर
जानने लगते हैं ॥ ८ ॥ केवल दर्शन की प्राप्ति किस को हावे सो कहते हैं—और जिन को दर्शनावर्णिय कम
मयः भय होगवा वे जिनपर केवल दर्शनको प्राप्त करके लोक अलोक के भय भावको संपूर्ण देखने लगते
हैं ॥ ९ ॥ केवल मृत्यु कम को हावे सो बताते हैं—जो साधु भी धारा प्रकार की मतिवा प्रतिज्ञा है उन का
पय रिवा तमुद-निर्भय आराधन किया एस सुमपचीरित साधु जिस के भोवनिय कम का नाश हुआ
ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय और अन्तराय इन पनयाविह कम का नाश कर केवल ज्ञानी बनकर निर्विशेष-
संपूर्ण लोकालोक को देखने हैं ॥ १० ॥ जिस प्रकार शुद्ध शुद्ध का मस्तक छेद करने से उस का नाश

॥ पष्ठम-दशा ॥

सुगमे आउसं तेणे भगवया एवमस्वार्थ, इह खलु थेरेहिं भगवतेहिं इक्कारस उवासग पडिमाओ पण्णत्ताओ, कयरा खलु ताओ थेरेहिं भगवतेहिं इक्कारस उवासग पडिमाओ पण्णत्ताओ? इपा खलु ताओ थेरेहिं भगवतेहिं इक्कारस उवासग पडिमाओ पण्णत्ताओ तंजहा-अकिरि । आदीनार्थ भवति, नो हिय पण्णाणे, नो हिय दिट्ठी, नो सम्मानादी, नोणितायावादी, नो सति परलोगवादी, पत्थिइहलोए, पत्थिपरलोए,

ओ पायणन जम्भू ! सुना है मेने भगवतन पेसा करा स्थिर भगवतने इग्यारह श्रावक की प्राप्ति ॥ कही है अहा भगवन् ! स्वदेर भगवतने तिस प्रकार इग्याह श्रावक की प्राप्ति कहा है ? प्रभो शिष्य ! यह आगे करेग वह स्थिर भगवतने इग्यारह श्रावक की प्राप्ति कही है तथया-इस न ॥ ११ ॥ मैं न कितनेक भक्तिरियावादी (नास्तिक धर्ति) भी होते हैं, व किस प्रकार के होते हैं ? तो कि-प्रमाण का वे इस उपादयवादी नहीं होते हैं ? वह यह पण उपादेय प्रज्ञा भी नहीं है वह हेय उपादेय

+ यहीन समयस्व भिष्यान् का प्रतिष्ठी है, तथा भिष्यान् से सम्यक्स की प्राप्ति होती है इसस्थि प्रपम भिरपाल का स्वल्प बड़ा दशाणा है

इस उपादेय योग्य और उपादेय अर्हते योग्य ५ धर्म के समष्ट को कहत है.

अहमि ए अहम्माणु ए अहम्मसेवि अहमिट्टे, अहम्मवत्ताई, अहम्मपलोइ, अहम्मजीवी,
अहम्मपल्लजमाणे अहम्मसील समदायारे, अधम्मेणजेव वित्तिकेप्पमाणे विहरइ ॥१॥
इणं हिंदि भिंदे अतमा लोहितपाणी चच्चाकदा खुद्धा साहस्सिया उक्खवण, वंचण,
मायाणियडि, कूडमति, सपठगगहुला, दुसीला, दुचरिया, दुरणुणेया दुव्वया दुपडि-
याणदा निस्सीले, णिवए निगुणे, निम्मेरे, निपच्चक्खणे पोसहोवासेअसाहु सव्वओ
पाणाइनायाओ अपडिविरया जावजीवाए, एव जाव सव्वओ कोहाओ, सव्वाओ

अथम क मेघन करनेवाले, अथर्म ही जिन के गए है, अथर्मपय ही स्वभाव है जिन का, अथर्म काम के ही अगीनार करनेवाले हैं, अथर्म कर ही जीवित [वृत्ति] है, जो लोक में अथर्म का ही प्रसार करते हुये अन्य में ही आगम प्रवर्तते हुवे, अथर्म ही जिनों का सीलाचार है उस का आचरण करते हुवे, अथर्म काम कर ही अपनी उपनीविका करते हुवे विचरते हैं ॥ १ ॥ वे जीवों को शरीर का स्वहादि से छेदन करते हुवे, भालादि से भेदन करते हुये, प्राणों का अन्त करते हुवे, जिन के शाय रक्त कर भरे हुवे रहते हैं, सैन्य घड-राग्न स्वभाववाले, छुट स्वभाववाले, दोनों लोक के दुःख से निढर, बिना विचारे काम के करनेवाले, अन्य जीवों को ठगनेवाले, निवड मायावि, कूडमति-अन्य को फसाने की बुद्धिवाले, इस प्रकार भेद कुप्रयोग के प्रवर्तक दुशील-दुष्ट स्वभावी-दुराचारी, दुर्मार्गानुगामी, दुर्नय के स्यापक, दुष्ट पालक,

गद्विनाया पद्मधिया, गति अरहता, गति चक्रवर्ती, गति बलदेवा, गति
वासुदा गति गिरया गति सुकडाणं दुकडाण फलवित्ति विसेता, जो सुचिण्णा
कम्मा सुचिभफला भवति, नो दुचिण्णाकम्मा दुचिण्णफला भवति, अप्पले कल्लणे
पाए नो पयायनिजीवा, गति निरया नरियसिद्धा, से एवंवाही एव पण्णे, एवं दिट्ठी
एव उदरागा भणिदिट्ठुआवि भवति ॥ सेय भवत महिच्छे, महारंभे, महापरिगहे,

१० यही युक्त भी नहीं है। य सम्बन्ध (सत्य) वादों भी नहीं है वे नियत (बोस) वादी भी नहीं है, वे परसेक है ऐसी स्थापना करनगद भी नहीं है वे कहन हैं कि वह लोक भी नहीं है, परकीक भी नहीं है। माता नहीं पिता नहीं। आरोग्य नहीं चक्रवर्ती नहीं बन्देब नहीं, बामुवेब नहीं, नरक नहीं नेरीये नहीं। मुहृत्य मुहृत्य के फल भी नहीं है अथ कर्म (पुण्य) के अथ फल (मुख) की प्राप्ति होती है, और दुष्टकर्म [पाप] के दुष्ट फल [दुःख] की प्राप्ति दोनों ही नहीं है अर्थात् पुण्य और पाप दोनों। नलकन है पुनत्रम्य भी नहीं है नरक में लगाकर सिद्ध स्थान पर्यंत कोई स्थान भी नहीं है। इस प्रकार के वे अद्वैतियांनी प्रस्थापना करते हैं, यही उन ही दृष्टी है यही उन का उद्देश है, यही उन ना राग भाव है, यही उन का अभिनिविष्ट विषय है वे किस प्रकार के होते हैं यह करते हैं—१ महा उ कायका जीव का भारम के करनेवाले, महा परिग्रह में लुब्ध, अपर्म करनेवाले, अपर्म के ही अनुग्रह,

दासी दास कम्मकर पोरुसाओ अप्पडिविरया जावज्जीवाए, सन्व कय विक्कय मासय माससूगं सयगाहराओ, अप्पडिविरया जावज्जीवाए, सन्वओ हिरण सुवण्ण धण धण मणि मोत्तिय सब सिलप्पवालाओ अप्पडिविरया जावज्जीवाए, सन्वाओ कुडतुह्ल कुडमाणाओ अप्पडिविरया, सन्वओ आरंभ समारभ अप्पडिविरया, सन्वाओ पयणपयावणाओ अप्पडिविरया, सन्वाओ करण करावणाओ अप्पडिविरया, सन्वाओ कुहणपिट्ठणताओ तज्जण तात्तण वध वध परिकलेसाओ अप्पडिविरया जावज्जीवाए,

जीव पर्यंत सर्वथा प्रकारे असामिप्याकारी सर्व छोटे हाथी गौ महिष मेंढे मैसे ही दास दासी (मोललिये) कर्म कर (नोकर) इन से भी निवृत्ते नहीं जावजीव पर्यंत, सर्वथा क्रयविक्रय [स्वरीदना वेंचना] मासा आशा दास हिसाब का करना इत्यादि वणिज के कर्तव्य से भी निवृत्ते नहीं जावजीव पर्यंत सर्वथा हिरण्य चांदी सुवर्ण धन (नगद) धान्य [अनाज] मणि वज्रादि मुक्ताफल [मोति] शूल-दक्षिणावर्त, सित्य प्रवाल-चिट्ठू मत्त से भी निवृत्ते नहीं जावजीव पर्यंत, सर्वथा सोटे छोले, खोटे माप से निवृत्ते नहीं जावजीव पर्यंत, सर्वथा आरंभ छे काय की घात समारंभ-घात की सामग्री मिलाने से निवृत्ते नहीं जावजीव पर्यंत, सर्वथा प्रकारे पाषन पचनादि किरिया से निवृत्ते नहीं, सर्वथा पाप कार्य करने करने से निवृत्ते नहीं, सर्वथा कुटना पीटना, ताडना वर्जना, बध-भारना बंधन में डालना पर को केवल-परिताप उप-

माणाओ सच्चाओ मायाओ सच्चाओ लोभाओ, सच्चाओ पेच्चाओ-दोसाओ
कल्हाओ अहम्कथाणाओ पेसुण्णा परिपरिवादीओ अरतिरति-मायामोसाओ मिच्छा
दंसणसह्जाओ अपढिविरया जावजीवाए, सच्चाओ कसाय दंतकट्टु ण्हाण महण त्रिलेखण
सह फरिस रस रूब गंध मह्जालंकाराओ अपढिविरया जावजीवाए, सगढ रह जाण जुग
गिह्ति थिह्ति सीया संदमाणिय सयणासण जाण वाहण भोयण पविरयर विघातो
अप्यढिविरया जावजीवाए, असमक्खियकारी, सच्चाओ आस हरिय गो महिस गवेलय

मन्य का दुःख देल कर आनंदित होनेवाले, सीलाचार रहित, आत्मगुति रहित, दुःखियों की दया रहित
पाप के प्रत्याख्यान रहित, पौपपौषवासादि करणी रहित, असाधु-मस्तीन वृत्ति-पापाचारी, प्राणाविपात,
मुपाबाद, अदृष्टादान, मैयुन, परिश्रम, मोष, मान, माया, स्नेह, राग, द्वेष, श्रेष्ठ, अम्याख्यान, पैयुन्य पर
परिवाद, रति, भरवि, माया मृषा, मिथ्यादर्शन शून्य इन महारा ही पापों से निवर्ते नहीं है जब
भीव पर्यंत महारा ही पापों का सेवन करनेवाला, सब प्रकार की कृपाय का उद्वेग से वैसी प्रवृत्ति
वाला, दोष पोवन न्मान करना विलेपना-विलकादि समाना, शुद्ध सर्व रस गंध पाला अस्मकार इन से
निर्गता नहीं सावर्जित पर्यंत, सर्व प्रकार के गांठे रय यान-विमान पुग गिह्ती-ऊट भो, गिह्ती-रावी की
भेपारी, श्रिदि का सदमनी द्रैय्या आसन यान पाहन योजन और घर बिलेरा इन से निवृत्ते नहीं जाव-

पियण अण्णयरगसि आहालघुयासि अवराहसि सयमेव गरुय दढवन्नोति तज्झा—इम-
दंढोहिं, इमंमुडेहिं, इमंतज्जेहिं, इमंतालोहिं, इमअदुयधणे करेह, इम नियल वंघणं
करेह, हडिअधण करेह, इमं चारगवंघणं करेह, इमं नियल संकोटिय मोहित करेह,
इमं हरयछिन्नय करेह, इमं पादच्छिय करेह, इम कन्नछिन्नय करेह इम नक्क-
छिन्नय करेह, इमं उट्टुछिन्नयं करेह, इमं सीसछिन्नय करेह, इम मुखछिन्नयं
करेह, इम वेइछाइय करेह, इमं हिउप्पडियं करेह, एवं नयण—इंसण—वयण—

मारीदार, काम करता-नोकर भोग पुरुष कृषी आदि इत्यादि जो हैं उन को किंचित् मात्र कोई सुख
[उगे] भी अपराध होने से उन को गुरु-बहुत मारी दंड का आरोपन करता है यथा इस को दंडो,
द्रव्यादि इल करो, इस को मूँहो मस्तक्यादि मूँहन करो इस की रज्जना कर ताडना करो
इस को चातुर्कादि से मारो, इस मज्जुल-कोविन बंधन कर बंधो इस को खोटे में घेदी में डालो, इस को
कारागृह में भाकमी में पुरो, इस को निबट सके बंधन में बांधकर इस के शरीर के अंदर की हड्डीयों
तोड़ो, इस के हाथ-पाँव-कान-नाक-ओष्ठ-मस्तक-मुख इत्यादि अंगोपांग का छेदन, करो, इस का प्रमदा
निमानो, इस का हृदय तोड़ डालो, इस के आँख रतल मुल जिन्हा उखाडो, इस को कूप नदी डूब
तलागिदि में डूबावो, इस को झिल्लादि पर पसो, इसको अम्बु आश्र फलकी तरह घोलो, इसको सूखीचडावो,

जेयावण्णे तहप्यगारा सावजा अचोहिया कम्मया कज्जति परपाणपरियावणकडा
कज्जति ततोवि अप्पढिविरया जावजीवाए से जहा नामए केइपुरिसे कलमसूर
तिल मुंग मास निष्फाव कुल्लथ आलिसंद एवमादीएहिं अयते कूरे मिच्छादंढ पठंजइ
एवमेवतहप्यगारंपुरिसजाएतिचिरवट्टलाभ्य कपोत कंयिजल भिय सहिसवगह गाह गोह
कुम्मासिरीसवादिएहिं मिच्छा दंढपठजइ ॥ २ ॥ जावियसेवाहरिया परिसा भवति
तंजहा-दासेतिवा, पेसेतिवा भत्तएतिवा भाइहेतिवा, कम्मकारएतिवा, भोगपुरिसेतिवा, तिसिं

नाने से निवृत्ते नहीं नावज्जीव पर्यंत भैसा वर्ण (अक्रियावादी) वैसे ही प्रकार के सावय कर्तव्य के करनेवाले, शेष बीज सम्यक्त्व रहित, अन्य जीवों को परिताप उत्पन्न करने के कर्म के करनेवाले इस से भी निवृत्ते नहीं नावज्जीव पर्यंत यथा दृष्टान्त कोई पुरुष बटले मयूह विल मृग उदद बाल कुल्य भलसी इत्यादि को अपने मक्षार्थ कुर परिणाम करके मिथ्या-निरपराध दंड प्रयुज्जते है-यात करते हैं इस प्रकार ही पर उक्त अनार्य पुरुष-वीतर घटेर सबे कपोत क्षपिजल मृग मारिप सूअर प्रार गोयरे काउरे सर्प मादि अन्य भी जीवों को मिथ्या दंड प्रयुज्जता है-विना अपराधि भीनों का वय करता है ॥२॥ अब इन के बाहिर की परिपक्वा होती है उन के नाय—? दास-मोलछिया, प्रेपक-नूत, भट-सुमट,

वेरायतणाइ सयणिचा ग्रह्य पावाइ कम्माइ उसण सभार कडेणं कमुणा, से जहा नामए
अयगोलेतिचा संलगोलेतिचा उदयसि पक्खिविते समाने अहे धरणिंतले पतिट्टाण भवति,
प्रामए तहप्यगारे पुरिसजाण वज्जबहुले धूणबहुले पक्कबहुले वेरबहुले दंभबहुले नियडि
अभायण ग्रहले अयसनहुले अणतिय ग्रहले उसण तसयाणघाती कालमासे कालकिच्चा

तत्त्वान् ही पाप फल का भुक्तेन वाला होता है यथा दृष्टान्त-लोहे का गोला, पत्थर का गोला पानी के रुढ़ादि में डालने से वह तत्काल पानी के नीचे पृथ्वी तल पर स्थिर होता है इस ही प्रकार वा तथा प्रकार का अक्रियामादी पापिष्ठ गुरुप, बहुत वज्र समान भारी पाप का संचयकर कर्म रूप धूल की भक्षिता कर पापरूप कर्दम की मगूरताकर, बहुत नीबों के साथ वैरविरोध की धडुलताकर, माया-दगल शानी नीचद माया, भेषपलत्र कर माया का पलटाकर बहुतों के साथ द्रोह उत्पन्नकर, इस प्रकार दुष्ट कर्म के संग्रह से महा भसाता उत्पन्न कर अप्रतीत की अधिकता कर प्रायः बहुत से प्रस जीवों की घात ना करने वाला काल के अगसर में काल प्राप्त होकर धरती (पृथ्वी) के तल में जावे नीचे महा दुःखमय नरक स्थान में प्रतिष्ठ जाता है॥२॥ अथ वह नरक स्थान किस प्रकारका है सो कहते हैं-अन्दर से तो बहिला कार गोल सन्न आग बाहिर से चतुष्कान नीचे जमीन पर छरी उमरे की धार के समान से संस्थित

रत्तिना वित्तिना मर्तिना उपलभति, तेण तत्थ उज्जल विउलं पगाढं कक्कस कडुयं
चडं दुक्खवदुग्ग तिज्जं दुग्घियास नरएसु नेरइया निरयवेयण पण्णब्बमाणा विहरति
॥६॥ म जहा नामण रुखेसिया पब्बगेजाए मूलछिन्ने अगोगरुए जातोनिच्च जातोदुग्ग
ज्ञानाग्निमम तत्तापवड्ढति एवामेव तहप्पगारे पुरिसजाए गम्भाउगम्भ, जम्मा

जिन की भावना धर्म ध्यान नहीं करती है व इन को कभी दुःख से बचने की बुद्धि होती है, इतने
काग को वो प्राप्त नहीं कर सकते हैं परन्तु उल्ला विशेष प्रकर्ष प्रगट अत्यन्त कर्कश-करवति समान,
कड़वा निम्न समान गंद-नीच मर्यकर महा दुःख विषम-कष्ट तीक्ष्ण सदैव निरंतर मंचूर दुःख जो सहना
अनि दुष्कर उस को वे नरक के नेरीये नरक संपत्ती वेदना का प्रत्यक्षानुभव करते हुवे विचरते हैं ॥ ६ ॥
आर भी वह अक्रियावादी जन यथा दृष्टान्त जिस प्रकार पर्वत के शिखर पर उत्पन्न हुवा महा वृक्ष उस
का मूल छेदित होने से वा वस का अग्रभाग-ऊपर के विभाग की गुरुता भारीपना से
खेंचाया हुवा जो वहां से नीच स्थान खाई दुर्गमादि हो वहां आकर पड़ता है इस ही
प्रकार अक्रियावादी पापिष्ठ पुरुष पूर्वोक्त पापों का समाचरण कर मनुष्य स्थानादि पर्वत के शिखर
स्थान से प्युन हुवे पुण्य रूप या आयुष्य रूप मूल छेदित होने से नीचे पड़ता है अनेक जाति योनी में
परिभ्रमण करते हुये एव गर्भ से दूसरे गर्भ में यों गर्भ से गर्भ में सक्रमण करता

धराणि तले मविद्यतिचा अहे धराणितले पतिट्टणे भवति ॥५॥ तेण णरगा अतोवट्टा
घाई चठरसा अहेखुरण्य संठाण सठाया निबधकार तमसा, ववगय गहचंदसूर नक्खच्च
जोइसप्पहा, मेदवसा मास रुहिर पूय पढलं चिक्खल्ललिचाण लेवणतला असूईवसा
परम दुब्भिगंधा काठय अगणि सवण्णाभा कक्खडफासा दुरुहियासा, असुभानरगा,
अनुमे नरएसु वेदणा, नो खेवणं नरएसु नेरइया—निदाएतिवा पयलातिवा सुतिवा

अग्नि वीर्य सदैव महा अंशकार-पौर अपकार कर ध्याप्त क्योंकि वह स्थान चन्द्रमा सूर्यग्रह नक्षत्र ताराओं की प्रभाकर अव्यपगत-रहित है और वह स्थान-भेद चरवी मांस रक्त पीप पदल इन कर प्राप्त है गोमनुष्य के सटे हुने मोटेसे भी अत्यन्त अनिष्ट दुर्गव जिस की दृष्टों विशाये प्रसरी हुई अशुचीकर जमिनका तला लेपित है अदर्शनीय है और भी वह स्थान जिस प्रकार कुंभार का निषाढा हलवाई की मही अग्नि कर व्याप्त होता है इस प्रकार नरक स्थान अग्नि समान देखीयमान मति ऊष्ण कर्कश कठोर दुर्गम सहन न हो सके ऐसा स्पर्शप्रप है महा अशुभ स्थान नरक का है और अत्यन्त अशुभ ही नरक की वेदना है इस प्रकारकी वेदना वेदते हुने ये नेरीये निश्चय करके किचिन्मात्र भी मुक्त से श्रयन करके निद्रा नहीं ले सकते हैं किचिद्ना, बैठे हुने खड़े हुने भी कभी निद्रा [ऊँच] नहीं आती है किसी वक्त भी शिथ को दुःख की निद्रादि नहीं कर सकते हैं, किसी काम में भी इन को कभी भी रति (इर्ष्य) प्राप्त नहीं होती है कभी भी

आजम्भ नारा-गमार दुक्त्वा आदुस्व दाहिणगामिए नरइए नेरइए कण्ठपविणए आगम
 साण दुहउभवाधि तेपावि भवति सत अकिरियावादी ॥ ७ ॥ से कित किरियावाइयावि
 भवति ? आहियावादी आहियपत्ते, आहियविट्ठी सम्मावादी, नियावादी, सतीपरलो-
 गवादी अरिय इहत्ताए अरियपरलोए अस्थिमाता, अस्थिपिता अस्थिअरिहता,

हुवा चारम्बार बन्स धारण करने हुवे चारम्बार मृत्यु को प्राप्त होता हुवा स्थानोस्थान दुःख ही दुःख का
 अनुभव करता हुवा भवि दुःख के स्थान रूप अस्तिष विद्या की नरक में कृष्ण पक्षिक दीर्घ ससारी
 नीच आगमिक ब्रह्म में दुर्लभबोधीपना प्राप्त करता है यह अक्रियावादी का कथन कर ॥ ७ ॥
 अहो मतवान् ! क्रिया शरी किस प्रकार के होते हैं ! हे शिष्य ! क्रियावादी अत्मा की आक्षीमानते
 हुवा भात्मा के द्वितवादी होते हैं अत्मा को रित होते इस प्रकार की जिन की प्रज्ञा बुद्धि है अत्मा
 रित साधन रूप सम्पत्करीपना जिन की आत्मा में है सर्व पदार्थों को यथावस्थित रूप से मानते हैं
 व ग्रहणते हैं जीयादि मोक्ष पर्यन्त पदार्थों को न्ययनयापेक्षा नित्य रूप में मानने वाले, परलोक भी हैं
 इस प्रकारका सत्यवान् स्थापन करने वाले, वे कहते हैं—यह लोकभी है परलोक भी हैं, अर्न्त भी है,
 पञ्चवर्त्ती भी हैं, चम्पनेव भी हैं वासुदेव भी हैं सुकृत्य भी हैं, दुष्कृत्य भी हैं सुकृत्य के फल भी हैं
 प्रयात् मुकृत्य-प्रच्छेद कर्म करने से प्रच्छेद-मुल रूप फल की प्राप्त होती है और दुरे दुःख रूप कम

गामीण नेरुण सुखपक्खिण आगमेसाण सुलुभमाहिण्णयावि भवति, सेत्त किरियीन्नादी ॥ ८ ॥ सत्त्व धम्मगईयावि भवति तस्सणं बहुय सीलवय गुणवेरणमण पच्चक्खण पोमहोन्वासाइ नो सम्मपट्टवितर पुब्बाइ भवति, पठमा उवासग्ग पट्ठिमा ॥ ९ ॥ आहायरा दाया उवासग्ग पट्ठिमा सत्त्वधम्म रूइयावि भवति, तस्सण बहुइ सीलवय

पना प्राप्त करते हैं अर्थात् सहज सदाब से धर्म की प्राप्ति करते हैं पर्याप्ता होते हैं यह क्रियावादी का कथन कहा ॥ ८ ॥ इस प्रकार अक्रियावादी सिध्यामति का और क्रियावादी-सम्यक्वृत्ती के स्वरूप के ज्ञान हुवे श्रावक धर्म में रुचीवत होने हुवे इग्यारह प्रतिपा प्रविष्टा का समाचरण करते हैं यथा—
 'सम्यक्वृत्ती मुत्रदावत, बहुत प्रकार के सील व्रत, अर्थात् पाँच अणुवर्तों और गुणव्रत अर्थात् सात गुण व्रतों व बिना प्रवों पाग्न कर व्रत में प्रवृत्त हैं नवकारसी आदि विविध प्रकार के प्रत्याख्यान पोषण पगम इत्यादि धर्म करनी जानते हुवे भी कितने अपत्यास्थानावरणिय मोहनीय काम के उदयकर होने कर नहीं सझने हैं कबल दर्शन श्रावक सम्यक्त्व का ही निपल पालन करते हैं ने
 दग्गम प्रतिपा के धारक होते हैं यह चतुर्थ गुणस्थानवर्ती अवर्ती सम्यक् दृष्टि जानना ॥ ९ ॥
 अथ अपर दृष्टी प्रतिपा-ये सर्व धर्म समाचरणे की रुचिबत हुवे सम्यक्वृत्ती वन्त बहुत प्रकार से सील व्रत-पाँच अणुव्रत और गुणव्रत-सात श्रितसायल, इनभारा बलमें प्रवृत्ते हैं पाप से निवृत्ते हैं नवकारसी प्रातिदश

तरसर्गं बहुय सीलव्यय जात्र सम्मपट्टवियाइ भवति, सेर्गं समाइय, वेसावगसीयं सम्मं अणुपालेता भवति सण चउइसि अट्टमि उडिट्ट पुणमासणीसु पडिपुण्ण पोसहं सम्मं अणुपालेत्ता भवति सेर्गं एगराइ उवसग्ग पडिमाणो सतमं अणुपालेता भवति सेर्गं एमारूवेणं विहारेणं विहरमाणेण एगाहेवा दुवाहवा तिहाहवा जात्र उक्कोसेर्गं चउमासाणं विहरजा चउत्थी उवासगपडिमा ॥४॥१२॥ आहावरा पचमा उवसग्ग पडिमा सव्वधम्मइयावि भवति, तत्सणं सीलव्यय जात्र सम्म पडिलेहिताइ भवति, सेण समाइयं जात्र समं अणुपालेता भवति, सेर्गं चउइसि तहेवसम्म अणुपालेता भवति, सेण एगराइयं उवासग्ग पडिमं सम्म अणुपालेता भवति, सेण असिणाणाए वियडभोयई

चौथी श्रावक की प्रतिमा-सब धम की कविधामा जो श्रावक होते थे बहुत सीलव्यत गुणव्रत याचत सम्यक् प्रकार से पासन करने वाला होते थे तेसे ही सामायिक दिशावमसि सम्यक् प्रकार निर्दोष पासने वाला होते और एक भरो रात्रि की परंतु एक रात्रि की कार्योत्सर्ग प्रतिमा नहीं करना कही है कार्योत्सर्ग करने की श्रावक की जो पोषय प्रतिमा है उस का सम्यक् प्रकार से आखरन नहीं कर सकते हैं वे इस प्रकार जयन्त्य एक दो तीन छठष्ट पार मीने उक्त आचार त विधेये यः चौथी प्रतिमा ॥४॥१२॥ पांचवी प्रतिमा-सब धर्म की कविधामा सीलव्यत गुणव्रतका भी पासनेवाला सामायिक देशवि कासिक करने वाला एक भरो रात्रि का कायुत्सर्ग करने की और इस सिवाय पोषय प्रतिमा उस का भी सम्यक् प्रकार से भट्टमी चतुर्दशी प्रभावस्या पूर्णिमादि उपेष्ट-दीर्घकरों के कल्पण के तीथी को पासन वाला होते, ज्ञान

पुआहंवा जाव उक्कोसिणं अट्टमासाविहरिजा,, सेतं अट्टमाउवसगगपडिमा ॥ ८ ॥ १६ ॥
 आहावरा नवमा उवसगगपडिमा सव्वधम्मरुईयावि भवति जाव राओवराइ धमयारी
 आरमे से परिणाए भवति, पेस्सारंमसेपरिणाए भवति, उडिट्टमचे से अपरिणाए
 भवति, सेण एयारुवेणं विहारेण विहरमाणे एगाहंवा दुआहंवा उक्कोसेण नवमासा
 विहरेवास्ति, तं नवमा उवासगगपडिमा ॥ ९ ॥ १७ ॥ अहावरा दसमा उवासगगपडिमा
 सव्वधम्मरुईयावि भवति जाव उडिट्ट मचे स परिणाए भवति, सेणखुरमुहएरा

नहीं, वे इस प्रकार के आधार में विहार करते जपन्य एक दो तीन महीने उल्टु आठ महीने पर्यंत
 बिचरे घर भाठवी प्रतिमा ॥ ८ ॥ १६ ॥ नववी श्रावक की प्रतिमा-श्रावक सर्वधर्म को आराधने की रुचिवाला
 पावत् अशोराति अरुंद ग्रहचर्य का फलक, सचिच वस्तु के योग का त्यागी, स्वय आरंभ करे नहीं,
 और अन्य को फइकर भी आरंभ करावे नहीं, परन्तु उन के निमित्त वस्तु तैयार कर देवे उस के भोग
 से निवृत्ते नहीं, वे इस प्रकार के आधार में विहार करते जपन्य एक दो तीन महीना उल्टु नव महीने
 पाल बिचरे यह नववी प्रतिमा ॥ ९ ॥ १७ ॥ दशवी श्रावक की प्रतिमा-सर्व धर्म की रुचिताला
 श्रावक मयम प्रतिमा से नववी प्रतिमा तक की हुई पीछे की सब मृषि का पानन करता हुआ
 यत्र इस प्रतिमा में उन के निमित्त आरंभकर कोइ आधार आदिक देवेतो उस को ग्रहण नहीं करे

छट्ठा उवासग पढिमा ॥ १४ ॥ आहावराससमा उवासगपढिमा सन्वधम्मरुइयात्रि
भवति जाव दियावा रातिं बंभयारी, सचिच्चाहारे सेपरिणाए भवति, आरंभसे अपरिष्ठा
भवति, सेणं प्यारूवेण विहारेणं विहरमाणे एगाहवा, दुआहवा जात्र उक्कोसेण
सत्तमासविहरिजा, सेतं सत्तमा उवासग पढिमा ॥७॥ १५॥ आहावरा अट्टमा उवासग
पढिमा सन्वधम्मरुइयात्रि भवति जात्र राओवा बभयारी, सचिच्चाहारे सेपरिणाए भवति
आरंभसे परिणाए भवति, पेसारभसे अपरिणाए भवति सेणं प्यारूवेण विहारेणं विहरमाणे

छठी प्रतिमा ॥ ६ ॥ १४ ॥ सातवी आठक ही प्रतिमा-सब घेय की रुचि वाला होवे यावत् अहोरात्रि हो अलंङित द्रव्यघय का शस्त्रे वाला होवे और सविष आहार समीप वस्तु रुचापानी आदि भोगवने में भी निश्चैरन्तु अपनेहाथ में छठी कायजीवों का कुट्यारंभ करनेसे निर्वर्ने नहीं वह इस प्रकार आचार में बिषरता हुआ अग्रयण एक शोवीनमहिने उत्कृष्टभावमहिने पर्यन्त बिचरेयः सातवी प्रतिमा ॥ ७ ॥ १५ ॥ आठवी धर्म की रुचिमान् यावत् उक्त क्रिया युक्त असल द्रव्यार्थ का पालक सविष आहार के सागी होवे और मय्य छ काया का आरंभ करना भी छोडे दे अपनी आत्मा का आरंभ से निवर्तने, परन्तु पेसारम-अन्य को रुझकर छ काया का आरंभ करने से निवृत्त

पुआहवा जाव उक्कोसेण अट्टमासाविहरिञ्जा,, सेतं अट्टमाठवसगगपडिमा ॥ ८ ॥ १६ ॥
 आहावरा नवमा उयसगगपडिमा सव्यधम्मरुइयावि भवति जाव राओवराइ चंभयारी
 आरमे से परिणाए भवति, पेत्सारंभसेपरिणाए भवति, उडिट्टुमचे से अपरिणाए
 भवति, सेण पुयारुत्वेण विहारेणं विहरमाणे एगाहवा पुआहवा उक्कोसेण नवमासा
 विहरेंजासि, तं नवमा उवासगगपडिमा ॥ ९ ॥ १७ ॥ अहावरा दसमा उवासगगपडिमा
 सव्यधम्मरुइयावि भवति जाव उडिट्टु मच स परिमाणं भवति, सेणंखुरमुडएगा

नहीं, वे इस प्रकार के आचार में विहार करते जिनमें एक दो तीन महीने उल्टा आठ महीने पर्यंत
 गिरे वर आठवी प्रतिमा ॥ ८ ॥ १६ ॥ नववी श्रावक की प्रतिमा-श्रावक सर्व धर्म को आराधने की रुचिवाला
 पावत् भरोरात्रि अदंढ प्रसन्नपर्व का पालक, सचिच वस्तु के भोग का त्यागी, स्वय आरंभ करे नहीं,
 और अन्य को कइकर भी आरंभ करावे नहीं, परंतु उन के निमित्त वस्तु तैयार कर देवे उस के भोग
 से निवृत्त नहीं वे इस प्रकार के आचार में विहार करते जिनमें एक दो तीन महीना उल्टा नव महीने
 परंतु विपरे यह नववी प्रतिमा ॥ ९ ॥ १७ ॥ दशवी श्रावक की प्रतिमा-सर्व धर्म की रुचिवाला
 श्रावक प्रथम प्रतिमा से नववी प्रतिमा तक बड़ी हुई पीछे की सब वृषि का पालन करता हुआ
 पचस इस प्रतिमा में उन के निमित्त आरंभकर कोइ आहार आदिक देवेतो उस को प्रभु नहीं करे

छट्ठाउवासग पढिमा ॥ १४ ॥ आहावरासधमा उवासगपढिमा सव्वधम्मरुइयावि
 भवति जाव दियावा रातिं वंभयारी, सचिचहारे सेपरिणाए भवति, आरंभसे अपरिणा
 भवति, सेणं प्यारूवेण विहारेण विहरमाणे एगाहंवा, दुआहंवा जाव उक्कोसेण
 ससमात्तविहरिजा, सेतं सत्तमा उवासग पढिमा ॥ १५ ॥ आहावरा अट्टमा उवासग
 पढिमा सव्वधम्मरुइयावि भवति जाव राओवा वंभयारी, सचिचहारे सेपरिणाए भवति
 आरंभसे परिणाए भवति, पेसारंभसे अपरिणाए भवति सेण प्यारूवेण विहारेण विहरमाणे

एही प्रतिमा ॥ ६१ ॥ सातवी श्रावक की प्रतिमा सब पैम की रुषि वाला होते यावत् अठोराधि
 ६१ अर्त्तिदव ब्रह्मचय का बलने बाण होते और सचिच भाहार सनीव वस्तु कषापानी आदि भोगवने
 ने भी निर्वैरान्तु अपने हाथ ने एही काय जीवों का कुयारम करने से निवर्ने नहीं यह इस प्रकार आचार में
 विचरना हुआ नान्य एक दो तीन भारिने उत्कृष्ट सात पादि ने पर्यन्त विचरेय ॥ सातवी प्रतिमा ॥ ७ ॥ १५ ॥ आठवी
 पैम की प्रतिमा यावत् उक्त क्रिया युक्त अत्यन्त ब्रह्मचय का पावक सचिच भाहार
 क सागी होते और अथ छ काया का आरंभ करना भी छोटे दे अपनी आत्मा
 का आरंभ से निवर्तने, परन्तु पसारम-अन्य को कहकर छ काया का आरंभ करने से निवृत्त

परित्याग भवति, तेन सुरमुखाया लुत्तिसि ए गहितायारभङ्गनेव तथा जे इमे समणा
निगमाणा धम्मेतं धम्मकाएण फासेमाणे पालेमाणे पुरउजुगमायाए पेहमाणे दहुण-
तमेमाणे उच्चदुपाएरिएज्जा, साहदुपाएरिएज्जा विचरिछंवा पायकदुरिएज्जा सतिपरिक्रमे
राजयामेय परिक्रमेज्जा नोउजुयंगण्ठेज्जा केवलसेनायए पेज्जवधने अजोछिन्ने भवति। एवं
से कप्पति नायत्रिधिपचए तस्यसे पुब्बागमणेणं पुब्बाठत्ते चाठलोदणे यछाउत्ते मिलगसूए
कप्पतिसे चाठलोदणे पडिगाहिताए, नो कप्पति मिलगसूए पडिगाहिताए, तस्यसे पुब्बाग-

करता, कदापि न पुरमुखा (विनामत) करावे तथा इच्छा हो तो मोक्ष भी करे साधु जैसे आचारका पालन करते
गए पात्र मुहपति राजोहरण रत्ने जो श्रमण निर्ग्रन्थ (साधु) के साती आदि १० धर्म शास्त्र में कोरे है उनका ही
सम्यक् प्रकारे अपनी काया कर स्वर्च-ययाविधी पालन करे, साधु की तरह ही रास्ते में चलता
हुआ भोगे को गुणमात्र धोसरे समाने (ही ६५) भूमी को देखता हुआ गमन करे, अस प्राणी पेनिन्द्रियोदे
दरतर अपने पाँच कोटि छठा छेरे यहाँ से संगान करले, तिच्छा उन भीषों से अलग एकान्त में पाँच को
रखकर घने जीव, गीत अन्ययाग में गमन करने का पराक्रम फोटे जो दूसरा अच्छा मार्ग जाने को हो तो
जिचाने मार्ग में गमन नहीं करे, इत्यादि साधु की क्रिया का पालन करे फक्त पुष्कल प्रादित्ते मेमयथन को
निष्तेज नहीं हुआ पुत्र कज्जपादि में मोहभान सहित विचरता है इस प्रकार इग्यारही प्रतिम के धारक

परिस्राए भवति, सेणं सुखमुदपूवा तुतेसिरए गहितायारभंगनेवत्था जे इमे समणा
निग्गयाण धम्ममेतं धम्मकारणं फासेमाणे पालेमाणे पुरउजुगमायाए पेहमाणे वहुण-
तमेमाणे उद्धुपाएरिएवा, साहदुपापरि०वा विचरिछवा पायंकदुरिएवा सतिपरिकमे
राजयामेव परिकमेवा, नोउजुयंगण्ठेवा केवलसेनायए पेजबधणे अवोछिन्ने भवति। एवं
से कप्पति नायविधिपत्तए तत्थसे पुब्बागमणेणं पुब्बाठत्ते चाउलोदणे पछाउत्ते भिलंगसूए
कप्पतिसे चाउलोदणे पढिग्गाहिचाए, नो कप्पति मिलंगसूए पढिग्गाहिचाए, तत्थसे पुब्बाग-

करवा, रुदापित सुखमुद(दिनापत) करावे तथा इच्छा हो तो लोच भी करे साधु नैसे आचारका पालन करते
वत्त पाव मुहयति रजोहरण रत्ते जो भ्रमण निर्ग्रय (साधु) के सांती आदि ० धम्म आदि में कोई है वत्तक ही
सम्बन्ध प्रकारे अपनी काया पर स्पष्ट-यथाविधी पालन करे साधु की तरह ही रास्ते में चलता
हुग भाग को युगमात्र घोंसरे प्रमाने (१॥ ६॥) मृषी को देखता हुआ गमन करे, व्रत प्राणी वेदीन्द्रियों के
देखकर अपने पाँव को छडा लेवे, वहाँ से संसारन करते सिच्छा उन जीवों से अलग एकान्त में पाँव को
रतकर चाहे जीव, रहित अन्ययाग में गमन करने का पराक्रम फोड़े जो दूसरा अच्छा मार्ग जाने को हो तो
जिवायसे मार्ग में गमन नहीं करे, इत्यादि साधु की क्रिया का पालन करे फक्त पुत्रकलत्रादिके प्रेष पथन को
विगोचन नहीं हुना पुत्र कलत्रादि में मोहभाव साहित विचरता है इस प्रकार इग्याग्वी पतिय के धारक

महाशक्ति-सामाजिक-दूर भासा मुलदेवसहायजी ग्वालाप्रसादजी

विधालिधार ५ नमस्तन आत्मदुसमा भट्टस फल्पति दुवभागउ भासिचर जहा
जाणनाजाण अजाणवासोजाण सेण पुयारुवेण विहारेण विहरमागे जहणणेण
एगाइया हुआइया उओसेण वसमासा विहरिजा दसमापडिमा ॥ १० ॥ १८ ॥
आहावरा एकदसमा उवासमापडिमा सज्जधम्मस्सइयावि भवति जाव उडिडुभचे से

मल्ल का लुर मुंद (रिजामत) करके फक्त एक खिला (चोटी) रसे उन को एक बत्त पूछने से व
बारम्बार पूछने से बोले परंतु दिन। सोमाया नहीं वे छे, बोले तो भी दो प्रकार की मापावोलना-कल्पता है
ज्ञानता है वे कह करे, जानता है और नहीं जानता। ऐसे उमे कहे नहीं जानता। इदवि जानता हुआ भी कहे जानता
परंतु वह सरता नहीं है। ऐसे प्रतिमा-ग्रहण किये पाहते द्रव्य निगन स्थापन किया प्रतिमा-ग्रहण करती बत्त
देवता नमगया नंतर पुत्रावि पूछे तो ऐसा भी नहीं करे की मैं नहीं जानता है क्यों कि उन को अग्रतीत
ब्रह्मदेवों और ऐसा भी नहीं करे कि असुक्त म्यान निगन है क्यों कि वे निकालकर आरंभ वृद्धि करे
इस स्थिये ऐसा करे मैं जानता है परंतु क्या सकता नहीं है। इस प्रकार के भाषणसे विचरते हुआ अधन्य
एक दो तीन मोहिने रक्तुष्ट दश माहने, बिपरे इति दसवी प्रतिमा ॥ १० ॥ १८ ॥ और इग्यारहवीं
श्रावक की श्रमिमा—सर्व पर्ये (साधु पर्ये) की इचीवासा श्रावक बोले वह उक्त दश ही प्रतिमा में कहे
इस विषी का मनुस्सम से पामन करणों यावत् उन के भिये बनाया आहार आदिक को भी ग्रहण नहीं

परिज्ञाए भवति, सेण खुरमुठएवा दुतेसिरए गहितायारमंढगनेवस्था जे इमे समणा
निगथाण धम्मकाएणं फासेमाणे पालेमाणे पुरउजुगमायाए पेहमाणे वट्टण-
तमेपाने उद्धट्टुपाएरिएज्जा, साहदुपाणरिएज्जा विचरिछंवा पायकदुरिएज्जा सतिपरिक्रमे
राज्यामेव परिक्रमेज्जा, नोउजुगयच्छेज्जा केवलसेनायए पेज्जवघणे अत्रोछिन्ने भवति।एवं
से कप्पति नायविधिपचए तत्थसे पुब्बागमणेण पुब्बाठत्ते चाठलोवणे पछाउत्ते भिलंगसूए
कप्पतिसे चाठलोवणे पडिगाहिसाए, नो कप्पति मिलंगसूए पडिगाहिसाए, तत्थसे पुब्बाग-

करता, कदाचिप खुरमुठ(विजामल) करावे तथा इच्छा हो तो लोच भी करे, साधु जैसे आचारका पालन करते
यद्यप्यत्र मुहपति रजोहरण रत्ने जो श्रमण निर्ग्रिप (साधु) के सांती आदि १०८ मन्त्रास्त्र में कहे हैं उनक ही
सम्यक् प्रकारे अपनी काया कर स्पृष्टे-यथाविधी मालन करे साधु की तरह ही रास्ते में चलता
हुआ आगे को युगमात्र पोंसरे प्रमाने (३॥ ४४५) भूमी को देखता हुआ गमन करे, उस प्राणी वेशिन्द्रयोदे
देखकर अपने पाँव को छटा सेवे, वहाँ से संग्रह करले तिच्छा उन जीवों से अलग एकान्त में पाँव को
रखकर चले नीच, राहित मन्यमाण में गमन करने का पराक्रम फोटे जो दूसरा अच्छा मार्ग जाने को हो सो
अविचाले मार्ग में गमन नहीं करे, इत्यादि साधु की क्रिया का पालन करे फक्त पुष्पकल्यादिके प्रेमघषयन को
विस्मृत नहीं हुआ पुष्प फलप्रादि में मोहभाव सहित विचरता है इस प्रकार इग्यारी प्रतिम के पारक

प्रयेण पुनः ॥ १ ॥ पञ्चागमोक्तं - । तत्र १८० गस्य ५५ द्दिग्गाहि लग्नो
 कल्पति से धाउलोदणे पडिगाहि ५५, तत्थण स पुव्वागमणे द्दिग्गुव्वा ३५ ॥ क प्पति से
 दोवि पडिगाहि च ए तत्थसे पुव्वागमणे ण दोवि पच्छउत्ते णो क प्पति से दोवि पडिगाहि च ए
 तत्थसे पुव्वागमणे ण पुव्वाउत्ते सेस क प्पति पडिगाहि च ए जेसे तत्थ पुव्वागमणे ण पच्छा
 उत्ते सेसे दो क प्पति पडिगाहि त ए तत्थसं गाहा नति कुल पिठाय पडिगाहि अणुपानहुत्त
 क प्पति एवं वदि स ए समणे वासगत्त पडिगाहि पडिक्कत्तसं मिक्कत्तं दलयहं, त चेवा ॥ पयारुत्ते णं

आपनो अपने आनीयों सजनों के घर में गोबर के लिये गलत करना कल्पता है वह जिस घर में
 गोबर जावे उस घर में उस के गये पाले जो गय पाले ११६८ पूसे नीचे उतार लिये हैं और दाल
 बेपार नहीं हो उन के गये बाद दास नीचे उतारी हो तो उन को वे पाले प्रण करना
 हो कल्पता है परंतु पीछे से उतारी दाल प्रण करना नहीं और कयापि घर में गये पड़ेसे दाल
 उतारी हो और पाले पीछे उतारे हों सो उन को दाल प्रण करना कल्पता है परंतु पाले प्रण
 करत नहीं कल्पता है इस में प्रकार उन के गये पड़ेसे जो दाल पाले दोनो ही तैयार हा गये हो
 पाले के नीचे उतार लिये हों तो दोनो ही प्रण करना कल्पता है और जो घर में गये के बाद दाल
 पाले दोनो पाले नीचे नहीं उतारे हों तो दोनो ही प्रण करना नहीं कल्पता है मतलब भी जो गये के

विह्वलमानं कइ पासिचा बदिबा के आऊसो तुम ! वचनोवसिए समणोवसिए एवं
पडिबोचिन्तइ अहमसा तित्तव्वसिया ॥ सेण एथारुवेण विहारेण विहरमाणे जहन्नेण
एगाहया दुआहवा तियाहया उक्कोसेण एव्वारसमासे विहरेब्बा ॥ एगारसमा उवासंग
पडिमा ॥ १९ ॥ एताओ खलु धेरेहि भगवन्तेहि एगारस उवासंग पडिमाओ
पगगत्ताआ रिचिमे ॥ २० ॥ इति छट्ठी वसा सम्मत्ता ॥ ६ ॥

परिने नैपार हुआ हो वही प्रण करना कल्पता है, और घर में गये के बाद तैयार हुआ हो वह ग्रहण
करना नहीं कल्पता है ॥ उस गृहस्थ के घर में आहार आदि के लिये प्रवेश करते वे श्रावक को
ऐसा करना कि मैं श्रावक की इग्यारवी श्रमणभूत प्रतिमा का वाहक श्रावक है, मुझे भिक्षा दो
उन को इस प्रकार के भाग्य में विचार करते हुये श्रावक को देखकर कोई पूछे कि अशो आयुष्मन् !
तुम क्यों हो ? वर नर कोई कि मैं श्रावक की इग्यारवी प्रतिमा का अर्पण कर आश्रक है इस प्रकार
आचार में विचार करते हुये नन्य एउ दो चीनपरिना बरुहइ इग्यारे परिना तक प्रार्थें ॥ यह इग्यारवी
पडि ॥ १२ ॥ यो निधय इग्यारे श्रावक की प्रतिमा स्थावर भगवन्ते करी है अवेब्बु ! वैसी ही देने
ने से करी है ॥ २३ ॥ इति श्रावक परिमा नामक छट्ठी वसा सम्मत्ता ॥ ६ ॥

॥ सप्तम-दशा ॥

सूर्यमि आउसे तण भगवथा एउ मक्खाय, इह खलु थेरेहिं भगवतेहिं, धारसभिव्खू
पडिमाओ पण्णराआ कयरा खलु ताआ थेरेहिं भगवतेहिं धारसभिव्खुपडिमाओ
पण्णराओ ? इमाआ खलु ताओ थेरेहिं भगवतेहिं धारसभिव्खू पडिमाओ
पण्णराओ तनहा १ मानियाभिव्खुपडिमा, २ दोमासियाभिव्खुपडिमा, ३ तिमासिया
भिव्खुपडिमा ४ चाउम्मानिया भिव्खुपडिमा, ५ एवमासिया भिव्खुपडिमा,
६ उम्मानिया भिव्खुपडिमा ७ सरामासिया भिव्खुपडिमा, ८ पढमासत्तराइदिया
भिव्खुपडिमा ९ दोषान्तरादिया भिव्खुपडिमा, १० ॥ तच्चा सत्तराइदिया

प्रशे प्रापुप्फत्त तम्ह'मिने मुना है भगवत्तेने ऐसा य । १ स्थिर भगवत्तेने बार मिधु-साधु की
करी है प्रशे भगवत्त ! स्थिर भगवत्तेने कौनसी मिधय साधु की बार प्रविमा करी है !
प्रशे दिप्प ! यह भोगे चहेगे वे स्थिर भगवत्तेने साधु की बार प्रविमा करी है उन के नाय-
१ प्रथम प्रविमा एक महिने की, २ दूसरी प्रविमा दो महिने की, ३ तीसरी प्रविमा तीन महिने की,
४ चौथी प्रविमा चार महिने की, ५ पांचवी प्रविमा पांच महिने की ६ छठी प्रविमा छ महिने
की ७ सात प्रविमा सात महिने की, ८ [आठवी] प्रथम प्रविमा सात भोगे रात्रि की, ९ (नववी

भिक्षुपण्डिता, ११ अहाराद्विद्या भिक्षुपण्डिता १२ एगराद्विद्या भिक्षुपण्डिता ॥ १ ॥
 मासिपण भिक्षुपण्डितम पडिपणस्स अणगारस्स निच्च वोसट्टकाए चियत्तेदेहे, जे केइ उवा
 सगा उयच्चति तंजहा विव्यावा, माणुसावा तिरिक्खजोणियावा, तेउपप्पे सम्मकाएणं सहइ
 म्यमइ तित्तिक्खइ अहिया-इ ॥ २ ॥ मासिपण भिक्षुपण्डितं पडिपणस्स अणगारस्स
 कप्पइ तमावत्ती भोयणरम पडिगाहिचए, एगापणगस्स अणाओच्छसुद्धोवहड निज्जु-
 द्दसरी प्रतिमा सात अहो रात्रि की, १० (दसवी) भीसरी प्रतिमा भी सात अहो रात्रि की, ११ इग्यारवी
 प्रतेमा एग अहोरात्रि की और १२ धारवी प्रतिमा एक अहो रात्रि की ॥ १ ॥ अप इन इग्यारे ही
 प्रतिमा का भारागन कले की विधी कहते हैं—एक महिने की भिक्षु की प्रतिमा में प्रतिपन्न हुवा
 साधु नरीर की शुश्रूषा का त्याग करते सदैव शरीरकी ममत्वको बंधे सीराकर विचरनेवाले होते हैं परिपक्व
 उयस्स के समुत्त होने से छोटी है शरीर की ममत्व जिनेने चने जो किसी प्रकार के उपसर्ग उत्पन्न
 होते हैं उन के नाम—१ प्यन्तरादि देव देवी सम्पत्ती, २ अनार्यादि धनुष्य धनुष्यनी सम्पत्ती, और
 ३ सिद्ध सर्पादि पशु-तिर्यच तिर्यचनी सम्पत्ती इनको सम-सरस् स्थिर शरीर को स्थापन कर सहन करे
 मन में क्षमा भाव कर सहे दुर्वचन के अनुचार कर खमे और क्रिया की तित्तिमा आदियासे ॥ २ ॥ एक महिने की
 प्रतिमा प्रतिपन्न हुवा साधु को एकदात आहारकी ग्रहण करना और एक दात पानीकी ग्रहण करना कल्पता है।

हिंसा, यहये दुष्पय चउष्पय समण माहण अतिही कियण वणिमग, कण्णइ से
एगसन भुंनमागसन पडिगहिंसए, णोदुण्हं णोतिण्हं णोचउण्हं, णो पचण्ह,
ओ गुणियधीण, णोयालवच्छाए, नोदारग पेज्जमाणीए, णो अतोएलुयस्स,
बोन्नियाए साहहु दलमाणीए, णोयाहिं, एगलुयस्स बोन्नियाए साहहु दलमाणीए

[पायें भारार गभे एक ही वक्त में भितना हाने या पहे उसे एक दात आहारकी करते हैं और पानी
का तार लोहक नहीं होये वहां तक एक एक दात पानी की करो है] यह भी जन २ कुलों में से आहार
पानी आदि ग्रहण करने की आज्ञा भगवान ने दी है उन २ आज्ञात कुलों में से एक बैतालीस दोष
रत, गृह के तय उद्गम्य जीनखिये बाद पचा दोवे, जिस को देना हो उसे देदिया हो श्रमण-आपसादि
प्रत्येक भतीरिफुणमीरयारीइनको देनेका होय दे दिया हो, और भीय गृहस्थ अकेला ही भोजन करने
देता हो, उनक पात स ग्रहण करना कहे, एतु दो तीन चार पांच या अधिक जन एकत्र भोजन करने
बडे हो उन के पास से लेना नहीं कहे, और भी गर्भवती स्त्री के भोगने के स्मिये जो आहार किया हो
व उस के भोगने पदिने ग्रहण करना नहीं कहे, बालक के पाम्ते किया हो वह उस के भोगने विना
नसा गों बरद, पहे को सन पान करती हुइ माता उसे छोडाकर द तो यह भी नहीं कहे, दातार
दोनों पवि पर के भंदर रत्नकर देवे या दोनों पांच पर के बाहिर रत्नकर देवे तो यह भी ग्रहण करना

एवं पायं अंतोकिष्ठा, एवं पायं बार्हिकिष्ठा, एतुयवि खंभश्चा एवं दलयति एवं से कण्ड पडिगाहिचप, एवं से जो दलयति, एवं से जो कण्ड पडिगाहिचप॥ ३ ॥
मासिषण भिक्खुपडिमं पडिवणत्स अणगारत्स तओ गोयरकाला पणसा तजहा आदिमे, मज्झिमे, चरिमे, आदिचरेब्बा, जो मज्झिमचरेब्बा, जो चरिमचरेब्बा, मज्झिचरेब्बा, जो आदिचरेब्बा जो चरिमचरेब्बा, चरिमेचरेब्बा जो आदिचरेब्बा जो मज्झिमचरेब्बा
॥ ४ ॥ मातियेणं भिक्खुपडिमं पडिवणत्स अणगारत्स छन्विहा गोयरचरिया

नहीं कल्पे, परंतु एक पाँच घर की देहली के अंदर और एक पाँच घर की देहली के बाहिर रखकर यों इस प्रकार देहली आलस होकर देवे तो प्रतिमा धारक साधु को वह आधार ग्रहण करना कल्पता है, और जो वह इस प्रकार होकर न देवे सो प्रतिमाधारी को ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ १ ॥ एकमाहने की भिक्षु की प्रतिमा-मध्यम साधू ३ भिक्षा ग्रहण करने के तीन काल कहें १ तृथ्या-१ आदि काल, २ मध्यम काल, और ३ अंतिम काल ॥ इस में से प्रथम काल में भिक्षार्थ जाने वाला प्रतिमा धारी साधु दूसरे और तीसरे काल में नहीं जावे, मध्यम काल में जाने वाले प्रथम और अन्तिम काल में नहीं जावे और अन्तिम काल में जाने वाला प्रथम और दूसरे काल में नहीं जावे ॥ ६ ॥ एक माहिने की भिक्षुक की प्रतिमा धारक साधु छ प्रकार से भिक्षा

१ तीसरे प्रकार दिन के तीन घंटे ०५ बजे, दो बजे और छीन घंटे के तीन काल अग्रजना

कण्पइ चठमासाओ भासिचए तजहा जायणी, पुच्छजी, अण्णमणी, पुट्टस्स वागरणी
॥७॥ मासिएणं भिक्खु पढिम पढिवअस्स अणगारस्स कण्पइ तओ उवसया पढिलेहिचए
तंजहा—अहे आरामगिहसिवा, अहे वियडगिहसिवा, अहे रुक्खमूलगिहसिवा ॥८॥
मासिएणं भिक्खुपढिम पढिवणस्स अणगारस्स कण्पइ ताओ उवसया अण्णविचए
तंजहा—अहे आरामगिहवा, अहे वियडगिहवा, अहे रुक्खमूलगिहवा ॥ ९ ॥

एक महीने की मिथुक की प्रतिमा पारन करनेवाले साधु को चार प्रकार की भाषा बोलना कल्पता है
वर्णा—१ आहार आदि की याचना करने के लिये बोले, २ श्राव व रास्ता पूछने के लिये बोले,
३ गुरु आदि की आज्ञा व स्थानकादि की आज्ञा ग्रहण करने बोले और ४ कोई पश्चादि पूछनेवाले
को उत्तर देने को बोले ॥ ७ ॥ एक महीने की मिथुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को जिस स्थानक में रहे,
वहाँ तीन जगह की प्रतिस्तेना करना कल्पता है तथया—१ आराम, बगीचे में बंगला आदि के नीचे,
२ मंदप उग्री आदि विकट स्थान के नीचे की ओर ३ वृक्ष के मूल की वृक्ष के नीचे की ॥८॥ एक महीने
का मिथुक की प्रतिमा धारक साधु को तीन उपाश्रय की आज्ञा ग्रहण कर रखना कल्पता है तथया—
बगीचे का वृक्षमण्डि, २ स्थान की उग्री आदि और ३ वन के वृक्षादि के नीचे यह भिस पालक की

या पानिगच्छन्ना तत्पण केद्व ब्रह्मण गाहाय आगच्छे जात्र जो से कण्डू त
अबलाचषण्या पयलनिचष्वा, कण्डू से आहारिय ।रयसए ॥ १३ ॥ मासियाण
भिक्षुपडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स अहे पार्यासि साणुवा कटप्पा हीरएवा कक्क
रएवा अनुपयेसेज्जा जो से कण्डू नीहारसए विसोहिचष्वा ॥ कण्डू से अहरियरीय-
सए ॥ १४ ॥ मासियाण भिक्षु पाडम पडिवन्नस्स अणगारस्स अरियसिवा पाणाणिवा
यीयाणिथा रएवा परियावजेज्जा, जो से कण्डू नीहरिचष्वा, विसोहिचष्वा, कण्डू से

करना नहीं कल्पता है परंतु वहां कोई मनुष्य मुनि को निकालने आवे मुनि की प्रांश पकड़ कर लेवे
तो वे प्रतिमापारी साधु उस गृहस्थ को पकड़ रखना उस को रोक रखना कल्पता नहीं है परंतु उस ही
शक्त इयां समिति युक्त निकल कर बाहिर आना कल्पता है ॥ १३ ॥ एक महिने की मिथुक की प्रतिमा
प्रतिपन्न साधु के पांच नीचे (पण्यली में) स्त्रीला कांय तण-कांस ककर इत्यादि प्रवेश करे [लज्जावे]
तो उस को पांच में से निकालना कल्पे नहीं, पांचको विरुद्ध निष्कटक करना कल्पे नहीं, पांच इया समिती
युक्त विचार करना कल्पता है ॥ १४ ॥ एक महिने की मिथुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को आंस में
गए । प्राणी पदगम्यारे यथादिका पीतयिनी प्रादेक धीम पदगम्याहो, गज भूल गट गद गे, इत्यादि आकर

आहारिय गीयचण ॥ १५ ॥ मासिपण भिक्खु पडिम पाडियन्नस्स अणगारस्स जत्थेव
मृरिअत्थंमज्जा तत्थेअ जलसिवा यलसिवा दुग्गसिवा, निणसिवा, पववसिवा,
गीसमसिवा, गढाण्णया दरीण्णया कण्णइ से तं रयणी तत्थेअ उअयणविण्णइ, नोसे कण्णइ
पटमगिगमिचण कण्णइसेवहं पाउण्यमाए जाव जलंते पाइणाभिमुहस्सवा,
दादिणाभिमुहस्सवा पढाणिणाभिमुहस्सवा उचाराभिमुहस्सवा आहारीयंरियिण्णइ ॥ १६ ॥

पेट हो तो हमें निरुज्जना, भ्रातृको विरुद्ध करना कठिना नहीं है, परन्तु इर्ष्यामिवी युक्त विचरना ॥ १५ ॥
एक मानने की प्रियुक्त की प्रतियोग साधु को रास्ते बन्दते जिस स्थान मूर्ख अज्ञ होजावे उस ही
स्थान जन्म स्था में (पानी के अंदर मकान बना हो बर्षा, तत्राप्य प्रथम मन्नाद्य हो वह मूल कर उस के
उपजाति जन्मस्थान नाम हो बर्षा) व्यक्त-जमीन पर दुर्ग-प्रवृत्ति में, नीच स्थान-द्वी आदि में, पूर्व के
ऊपर, विषम स्थान में, खड़े में, पूर्व की तुफान में, इत्यादि स्थान में आभयप्रपारी को रात्रि रहना
करना है, पंडु मूर्ख अज्ञ एवं बाद एक पाँच भी आगे गमन करना नहीं कल्पता है जब प्रातः काल होवे
मृग के प्रभा प्रमार करे आगवत्यमान मूर्खोदय होनेतत्र पूर्व पाथम दक्षिण उत्तर इन चारों दिशा में से
इच्छा हो उस दिशा में ईषा पापानि युक्त विचरे ॥ १६ ॥ एक मदिने की मिथुनी प्रविष्टा प्रविष्टान्

मासियण भिक्खुपडिमं पडिवन्नस अणगारस्स णो से कप्पइ अणतरहियाए पुढीए
 निद्राइत्तएवा, पयलाइसाएवा केगलीवुया आयाणमेय से तस्य निदायमाणेवापयलाय-
 माणेया हत्थेहि भूमिपरामूसेज्जा आहाविहिमेगठाण ठाइत्तए निक्खमिच्चएवा उच्चार
 पासवणेण उवाहिज्जा, नो से कप्पइ उगिण्हिच्चएवा, कप्पइ से पुञ्च पडिलेहए
 थडिले उच्चारणासवण परिट्टुविच्चए तमेव उवसय आगम आहाविधि ठाणठाइत्तए
 ॥१६॥ मासियण भिक्खु पडिम पडिवन्नस अणगारस्स नो से कप्पइ ससरक्खेणं

साधु को भक्त रीत तत्काल की खोवी हुई मही पर निग लेना ऊंयना नहीं कल्पता है, क्यों कि केवल
 मनी का कहना है कि ग॥ कर्मण्य का कारन है वह साधु वा गृता हुआ ऊंयता हुआ इस्तादि अंगो
 पांग का सन्निप पृथ्वी का स्पर्श भरे-भदन करे, इसलिये दूसरा निर्णेप स्थानक देख कर रहे उस में
 प्रेय करे निरुले और यहीनीत लघुनीत की थाथा होवे तो उस को रोक रखना कल्पता नहीं है
 क्यों कि रोगादि की उत्पत्ति का कारण है इसलिये पथम प्रतिलेखन कर रखी हुई जो अगत होवे
 बर्हा जाकर लघुनीत गहीनीत की थाथा निवार फिर पीछा जिस उपाश्रय में रहा उस उपाश्रय में आवे, आवागामन व
 परिगमन की क्रिया की निरति के वासे वायोग्यगोदि करे ॥१७॥ एक महीनी की भिक्षु की प्रतिमा प्रतिपन्न

आहारिय रीयत्त ॥ १५ ॥ मांसिपण भिक्खु पटिम पट्टिवस्सरस अणगारस्स जत्थेव
 मुरेर अत्थेमत्ता तत्थेय जलसिवा थलंसिवा दुरगसिवा, निणसिवा, पय्यसिवा,
 रीसमसिवा, गहाएवा दरीएवा कण्णइ से त रयणी तत्थेय उवायणाविच्चए, नो से कण्णइ
 पदमविगमिच्चए कण्णइसेक्कहु पाउण्यमाए जाव जल्लेते पाइणाभिमुहस्सवा,
 दाहिणाभिमुहस्सवा पहीणाभिमुहस्सवा उच्चराभिमुहस्सवा आहारीयरियच्चए ॥ १६ ॥

पेट हो तो उभे निश्चलना, आत्माको विधुद करना कल्या नहीं है, परन्तु ईर्ष्यामिती युक्त विचारना ॥ १५ ॥
 एक घाँसे भी भिक्षुकी प्रणिमा प्रतिपन्न साधु को रास्ते चलने जिस स्थान मूर्ख भक्त होमावे उस ही
 स्थान नव स्थान में (पानी के अंदर यकान बंधा हो वहाँ, तथ्य प्रथम जमाअय हो पद मूल कर उस के
 स्वत्वात् नवस्थान नाय हो वहाँ) स्वल्-जमीन पर दुग अन्धी में, नीच स्थान-द्वी आदि में, पूर्वत के
 ऊपर, विषम स्थान में, खड़े में, पवन की गुफा में, इत्यादि स्थान में आत्मप्रवर्पारी को रात्रि रहना
 करना है, परंतु मूर्ख अस इवे पाद एक पाँव भी आगे गमन करना नहीं कल्पता है अथ प्राप्त काम होवे
 मूल के प्रथा प्रमार करे नागव्यमान मूर्खोदय होवे तब पूष पाध्य त्रसिण उच्चर इन चारों दिशा में से
 इच्छा हो उस दिशा में इया सायानि युक्त बिचरे ॥ १६ ॥ एक घाँसे की भिक्षुकी प्रणिमा प्रतिपन्न

भिक्खु पडिम पडिवणस्स अणगारस्स नो कप्पइ आत्तस्सत्ता हत्थिस्सत्ता गोणस्सत्ता
 महिमम्मत्ता कोलस्सत्ता सुणगत्तत्ता पुट्टस्सत्ता वगस्सत्ता पुट्टस्सत्ता आयिमागस्स पयमवि
 पच्चासक्कि चए, अट्टट्टस्सत्ता आययमाणस्स कप्पइ जुगमित पच्चोसक्कि चए ॥ १९ ॥ मासियण
 भिक्खु पडिमं पडिवन्न अणगारस्स जो से कप्पइ छायाओ सीयति, जो उण्हति चयए
 उण्हए उण्हति नो वायचए जं तत्थ जया सिया त तत्थ तहा अहियासेइ ॥ २० ॥

भमा मभर कुत्ता, व्याघ्र, सिंह आदि दुष्ट-कुर जीवों अथवा दुष्ट स्वभावी मनुष्यों जो सन्मुख आते हो
 उन का स्वेत्तकर कि यह मुझे मारेंगे ऐसा भय लाकर पीछा फिरना या एक, पाँच मात्र भी इधर उधर
 जाता स्वेत्तना नहीं है परंतु जिस प्रकार जिस मार्ग में जाता हो उस ही मार्ग में ईर्ष्या समिती युक्त गमन
 करता पत्ति छुर्नी जीव अदुष्ट हो वह कमी बन साधु को स्वेत्तकर मयमीत होता हो मढकर मगता हो
 ता उन साधु को जुग मात्र चार हाथ जमीन पीछे इधर उधर सरक जाना कल्पता है क्यों
 कि यह मन्त्रकुर आगे अनेक उपद्रव करे उसे नितारने, वया के लिये तो सरके परंतु स्वतः के शरीर की
 रक्षा लिये पीछा हटे नहीं ॥ १९ ॥ एक महिने की मित्र प्रतिमा प्रतिपक्ष साधु को छाया से घृप में
 जाना और घृप से छाया में जाना नहीं कल्पता है परंतु जिस स्थान में शीत ताप रूप जो परिपक्व
 उत्पन्न होवे वही समभाव से सहन करे ॥ २० ॥ अश्वे शिष्य ! उक्त विधि एक महिने की भिक्षु की

एतद्दि तादृशं नृत्तं नृत्तम् । पाणाला निवृत्तमित्युच्यते । अहं नृत्तं
 एतं पाणज्या सप्तमस्य स अचप्या जहृत्ताएवा मल्लताएवा यकत्ताएवा विद्वत्थे से
 कप्यद् गाहायइकुल भत्ताएवा पाणाएवा निवृत्तमित्युच्यते ॥ १७ ॥
 मासियणं भिक्खु पडिम पटिवत्तस्स अणगारस्स नो से कप्यद् सीउदगत्रियेहेणवा
 उमिणेदग वियइणवा हरथाणिवा पायाणिवा दत्ताणिवा अच्छीणिवा मुहाणिवा
 उच्छेलेत्तएवा पधोइसएवा णणस्थ लेवालेवेणवा भत्तमासेणवा ॥ १८ ॥ मासियणं

साधु का बाहिर जाकर या विहार करके भाये हा बैस ही सचिष रज [पूल] से भरे हुये पावों कर
 गृहस्थ क घर में आहार पानी ब्रह्मण करने के लिये प्रवेश करना निकलना कल्पता नहीं है, परंतु बाहिर
 में भाये बाढ ऐसा जानने में आवे कि वे सचिष रज कर भरे हुये पावों पसीने कर पैल कर कर्दमादि कर
 इस क जीव चिह्नम होगये हैं तो फिर गृहस्थ क घर में आहार पानी के लिये प्रवेश करना निकलना
 कल्पता है ॥ १७ ॥ एक माहिने की मिशुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को ठंढे भक्षिण पानी कर गरम
 भक्षिण पानी कर हाथ, पाँव, गर्त, अर्ध मुह पस्नायना पोना नहीं कल्पता है परंतु इतना विक्षेप जो
 प्रत्य रन्तु प्रयान् प्रयुनी आनि का जो भोगोपांग मरा हो तो उसे दूर करे, तथा योगन किये बाद हाथ
 मुरवादि मुद करना कल्पना है ॥ १८ ॥ एक माहिने की मिशुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधुको घोडा, हाथी, बैल,

भिगनु पतिमं पतिधनगम्य अणगारस्य नो रूपं आसस्सत्रा हस्तिस्सत्रा गोणस्सत्रा
महिसगत्रा कालस्सत्रा सुगसत्रा पुट्टस्सत्रा पुट्टस्सत्रा आत्रियमागस्स पयमनि
पचासत्तिचण, अट्टुमसया आत्रयमाणस्स कप्पइ जुगमित पमोसत्तिचण ॥ १ ॥ मासियण
गिरु पतिमं पतिधन अणगारस्स जो से रूपइ छायाओ सीयाति, जो उण्हतिइ चगण
उण्हण उण्हति नो चायचण जं तथ जया सिया त तथ तहा अहियासेइ ॥ २ ॥

भगवत्, कृपा, व्याघ्र, सिंह भ्रातृ वृद्ध-कुर जीर्ण अयस्य दुष्ट स्वभावी मनुष्यो जो समुल आते हो
वन त नैवहा । त गढ मुझे मारेंगे ऐसा भय लाकर पीछा फिरना या एक, पाँच मात्र डर
सत्ता गन्तव्य नहीं है परंतु जिस प्रकार जिस मार्ग में जाता हो वस ही मार्ग में ईर्ष्या समिती युक्त गमन
त यदि धृष्टी नीर भ्रष्ट हो गढ कभी उन साधु को देराकर भयभीत होता हो मदकर भगता हो
॥ उन साधु को जुग माघ चार दाम जमीन पीछे डर डर सरक जाना कल्पता है क्यों
। त भक्तकर भागे भेगा उपन्य करे वसे निगारने, क्या के लिये तो सरके परंतु स्वत के क्षीर की
ता त्रिभुवे पीछा दे नहीं ॥ १० ॥ एक महिने की भिद्य प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को लाया रो धूप में
जाता और धूप से लाया में जाना नहीं कल्पता है परंतु जिस स्थान में शीत साप रूप जो परिणत
उत्पन्न राजने समभाव से रहन करे ॥ २० ॥ भवो जित्य ! उक्त विधी गक पाँचने की भिद्य ही

निजसु नदिम नदिमनरा अणमाररा ॥ कण्ठ आसारना हतिभरना गोणरराभा
 भित्तारा ॥ १७॥ रसामुनगरा नुद्धरसना गमरसना पुद्धरसना आनिगमा भरत गगगनि
 नपारासिचिपु अमृद्धरसना आनगमाजरत कण्ठजुगमिरा यमोततिःसना ॥ १८॥ आसिमणे
 निजसु नदिम पविश अणमाररा जो रो कण्ठ रूपाभाओ रीगति, जो उणत्तिइसगण
 उण्ण उणत्ति जो वागपण जं तरु अभा सिगा तं तरु ताग प्रतिगारेइ ॥ २० ॥

नरा राभर कुला, दया, सिद्ध आदि वृद्ध कर पीयो भगना नृप रभापी मारणे ओ राग्युल भाते हो
 ११ ॥ नमरा कि मर पूत मोंगे पेसा भन व्याहर पीत निरसा या पक'पान मास भी इभर उभर
 १२ ॥ कथना मर्दी है नरतु जिता नकार भरा मार्ग में वाता हो उर ही मार्ग में ईर्ण सगिरी भूक्त गमन
 १३ ॥ गदि धुम्री उी ॥ अमृष्ट हो वह कली उभ रागु को नृपकर भवपीत होता हो भडकर भगता हो
 १४ ॥ रा गा ॥ का नृम माय पार दाम अभी ॥ धिरे इभर उभर राएक आस कथना है, ननों
 १५ ॥ उद भन्वकर भाग भ ॥ उणत्रय करे उरे निभारे, क्या क विने मो राएके परतु स्वता के चरीर की
 १६ ॥ विने पीता हो मर्दी ॥ १७ ॥ एक मर्दो की मिल मतिगा प्रलियन रागु को उभा रो भूय मे
 १८ ॥ भोर भूय ते राजा मे आता मर्दी कथना है, परतु जिता एगा में क्षीत ताग रूप ओ परिपद
 उल्लस मोर ॥ रा रागभार से राहर करे ॥ २० ॥ अभा विगम ॥ एक, सिंग एक मर्दि ॥ को भिरक की

'त्यल्ले ताल्ले १६ १७ १८ नचए । पाणाळा निरचमिरे ८४ अभिचित्त १५५ अह रण
 पर्थ पाणज्या समसम्ब स अतएया जहसाएया मात्रसाएया पंचकाएया विद्वत्थे से
 पण्डइ गाहाराइकुलं भचाण्या पाणाएया निवम्बमिच या यत्रिसित्तएया ॥ १७ ॥
 मासियणं भिखु पडिम पडिरसम्म अणगास्स नो से कण्ण मीउदगनियडेणवा
 उमिबोदग रियडेणवा हत्थाणिवा पायाणिवा दत्ताणिवा अच्छीणिवा मुहाणिवा
 उच्छेालीचएया पधोइत्तएया जणगथ ल्वाल्लेचणवा भत्तमासजया ॥ १८ ॥ मासियणं

साधु का बाहिर आकर या बिहार करक आपें हा वेंसे ही सांचिल रज [घूल] स भर हुं पारों कर
 गृहस्थ क घर में आहार पानी प्रदण करने क लिये प्रवेष्ट करना निकलना कल्पना नहीं है, परंतु बाहिर
 न भाव बाद एसा मानन में भाव कि वे सांचिल रज कर मरे हुं पारों पर्वतों क मेल करकईमादि कर
 हम के जीव विध्वंस होगये है ना फिर गृहस्थ के घर में आहार पानी के लिये प्रवेष्ट करना निकलना
 कल्पना है ॥ १७ ॥ एक बालिन की भित्तुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को ठंड भविष पानी कर गरम
 भविष पानी कर हाथ, पर्व, गीत, अर्चन पुढ पम्पायना पोना नहीं कल्पता है परंतु इमना विशेष जो
 अन्य रम्तु भर्षात्र प्रगुची भाति कर जो अंगोपांग मरा हो तो उसे दूर करे, तथा भोजन किये पात्र हाथ
 मुरादि शुद्ध करना कल्पना है ॥ १८ ॥ परपाहिनेनी भिषुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधुको गोदा, हाथी, बैल,

पंचमासिया जात्र पंचदत्तीओ छम्मासिया जात्र छदत्तीओ॥सप्तमासिया जात्र सप्तदत्तीओ
॥ जेजसिया मासिया तेतचिया दत्तीयाओ ॥ २ ॥ पट्टमासस राइदियाणि भिक्खु पट्टिम
पट्टिण्णस्स अणगास्स निच्च नोसट्टुकाए जात्र अहियासेइ, कप्पइसे चउत्थेण भत्तेण
अप्पाणएण चहिया गामस्सत्ता नगरस्सत्ता जावरायहाणीएवा उच्चाणगस्सत्ता पासेह्णगस्सत्ता
नसत्तिथस्सत्ता, ठाणठाइत्तए, तत्थ दिव्वमाणुस्स त्तिरिक्खजोणिया उवसग्गा समुप्पजेज्जा

पानी की ग्रहण करे, ऐसे ही छ मास की छद्दी प्रतिमा में छ दात आहार की और छ दात पानी की
ग्रहण करे, ऐसे ही सात माहिन की सातवी प्रतिमा में सात दात आहार की और सात दात पानी की
ग्रहण करे यह तीसरी से सातवी प्रतिमा तक तो प्रत्येक प्रतिमा एकैक माहिन की होती है और एकैक
दात की वृद्धि की गई है ॥ २२ ॥ अब पाँहली प्रातमा सात अहोरात्रि की जो उस को प्रतिपक्ष दुवे
सात्रु सदैव शरीर को बोसीराकर निर्ममत्व रहते हैं, यों एकमासकी मिशुक प्रतिमामें कहीवह सब विधि यहाँ
करना यात्रन परिपट उपसर्ग जो उत्पन्न होते हैं वे सब समभाव से सहन करते हैं और चौबीशर
प्रयात्र पानी का भी त्याग कर एकान्तर उपवास करते हैं ग्राम के यात्र राजधानी के बाहिर रहते हैं
(निनि को मूय की आनापना खेतें हैं और रात्रि को तीन प्रकार के आसन करते हैं तथया—) चित्ते
सोते रहें = एक ही तरफ लेने सोते रहें या सत्र रात्रि कायोत्सर्गे कर बैठे रहते हैं उस वक्त जो उनकी

०१ ग्लु ०५ मासिया भिन्नु गडिमा अहागुत्त अहाकण्य अहामग्न अहातर्द्ध सस्मकाएण
 समित्ता पात्रित्ता साहित्ता नीरित्ता कटित्ता आगहित्ता आणाए अणुगलेत्ता भवति
 ॥ २१ ॥ दा मा न्याण भिन्नु गडिम पांडिवस्सरस अणगारस निब्वोसट्टुकाए जाव
 दा दत्ती ॥ निमासिय निद्धिदत्तीओ ॥ चठमासिया जाव चत्तारिदत्तीओ ॥ पच्च

प्रतिमा आराधने शत्रु साधु की कही उमे मूष में कही विधी प्रमाने साधु के आचार-कल्प प्रमाने जो
 जिन मार्ग की ये साधुयम की रीति है उस प्रमाने जिस प्रकार भगवतने कही है उस प्रमाने यथावत्
 मन्थन प्रकार से अपनी काया करके स्वर्ण उपयोग पुक्त पालनकरे, भविचार नहीं लगने देवे
 पुद् करे निम मात्र से ग्रहण की उस ही भाव से पार पर्वोचने, नीति युक्त आराधे पाले इस प्रकार
 आराधन कर निनाशा का अनुपामक होवे। इति प्रथम प्रतिमा प्रतिष्ठा विधी॥२॥ अथ दो महिने की साधु
 की प्रतिमा प्रतिपन्न हुवे साधु सदैव अपने शरीर को बोसीराकर अर्थात् शरीर की ममत्वका त्यागकर यावत्
 ने दाति आहारकी और ने दाति पानीकी ग्रहणकरे और विधी सब पूर्वोक्त एक महिनेकी प्रतिमा भेसी
 ही जानना तीन महिने की प्रतिमा भी विधि भी ऐसी ही जानना जिस में इतना विधेय तीन दाति आहार
 को तीन दाति पानी की ग्रहण करे ऐसे ही चौथी चार महिने की प्रतिमा में चार दाति आहार की और
 चार दाति पानीको ग्रहणकरे ऐसे ही पाँचवी पाँच पाँच पाँच प्रतिमा में पाँच दात आहारकी और पाँच दात

पंचमासिया जाव पचदशीओ छमासिया जाव छदशीओ॥सत्तमासिया जाव सत्तदशीओ
॥ जेजधिया मासिया तेतचिया द्दतीयाओ ॥ २ ॥ पढमासत्त राइवियाणि भिवखु पढिम
पडिगणस्स अणगारस्स निच्च योसट्टकाए जाव अहियासेइ, कथइसे चउत्थेण भचेन
अण्णाणएण दहियागामस्सया नगरस्सया जाव राधहाणीएवा उच्चाणगस्सया पासेह्णगस्सया
नसिच्चियसवा, ठाणठाइचए तत्थ दिव्वमाणस्सतिरिक्खजोजिया उवसग्गा समुप्पज्जेज्जा

पानी की प्रण करे, ऐसे ही छ मास की छठी भाँति में छ दात आहार की और छ दात पानी की
प्रण करे, ऐसे ही सात भाँति की सातवी प्रतिया में सात दात आहार की और सात दात पानी की
प्रण करे यह तीसरी से सातवी प्रतिया तक तो प्रत्येक प्रतिया एकैक भाँति की होती है और एकैक
दात की वृद्धि की गई है ॥ २२ ॥ अथ पौली मातया सात अशेरात्रि की जो उस को प्रतिपन्न हुवे
साथ सदैव शरीर को बोसीराकर निर्ममत्व रहते हैं, यों एकमासकी मितुक प्रतियामें कही वह सब विधि यहाँ
कदना यावत परिपट उपसर्ग जो उत्पन्न होते हैं वे सब समभाव से सहन करते हैं और चौबीशार
प्रयात्र पानी का भी त्याग कर एकान्तर उपवास करते हैं ग्राम के यावत् राजधानी के बाहिर रहते हैं
(दिन को मर्य की आतापना छेते हैं और रात्रि को तीन प्रकार के आसन करते हैं तथया—) चित्ते
सोते रहें २ एक ही तरफ छेते सोते रहें या सब रात्रि कायोत्सर्ग कर बैठे रहते हैं उस वक्त जो उनको

एवमस्मिन् जाव पचषर्धाओ छम्मासिया जान छदहीओ॥सत्तमासिया जात्र सत्तदत्तीओ
॥ जेजधिया मासिया तेत्तिया दत्तीयाओ ॥ २॥ पढमासत्त राइदियाणि भिक्खु पढिमं
पडिउणस्स अणमारस्स निच्चं वोसट्टुकाए जाव अहियासेइ, कणइसे चउत्थेण भस्सेण
अण्याणपण अहियाग्गमस्सग्ग नगरस्सवा जात्र रायहाणीएवा उत्ताणगस्सवा वासिह्णगस्सवा
नसत्तियस्सवा, ठाणठाइसए, तत्थ दिव्वमाणस्स त्तिरिक्खजोविया उवसग्गा समुप्पजेज्जा

पानी की ग्रहण करे, ऐसे ही छ मास की छही प्रतिमा में छ दाव आहार की और छ दात पानी की
ग्रहण करे, ऐसे ही सात माहों की सातवी प्रतिमा में सात दाव आहार की और सात दात पानी की
ग्रहण करे यह तीसरी से साववी प्रतिमा तक वो प्रत्येक प्रतिमा एकै महिने की होती है और एकैक
दात की शुद्धि होती है ॥ २२ ॥ अब पाँचवी प्रतमा सात अहोरात्रि की जो वस को प्रतिपन्न हुवे
साथ सदैव शरीर को बोसीराकर निर्ममत्व रहते हैं, यों एकमासकी मिश्रुक प्रतिमामें कही वह सब विधि यहाँ
करना यात्रत परिपट उपसर्ग जो उत्पन्न होते हैं वे सब समभाव से सहन करते हैं और बोधीहार
प्रदान पानी का भी त्याग कर एकान्तर उपवास करते हैं प्राप के यावत् राजधानी के बाहिर रहते हैं
(दिन को मृत्यु की आत्मापना लेते हैं और रात्रि को हीन प्रकार के आसन करते हैं तदया---) चित्ते
सोते रहें २ एक ही तरफ झे सोते रहें या सब रात्रि कार्यात्सर्ग कर बैठे रहते हैं उस वक्त जो उनको

पुन खलु एमा मासिया भिम्बु गडिमा अहासुच अहाकर्णं अहामगं अहातर्षं सम्मकार्ण
 कामित्ता पालित्ता सोदित्ता तीरित्ता कटित्ता आगहित्ता अणुपालित्ता भवति
 ॥ २१ ॥ दो मांन्याण भिम्बु पढिम पढिवन्नरम अणगारस्स निम्बोसट्ठकाए जाव
 दा दत्ती ॥ तिमासिय तिनिदत्तीओ ॥ चटमासिया जाव चत्थारिदत्तीओ ॥ पञ्च

प्रतिमा आराधने वाले साधु की कही उस मूत्र में कही विषी प्रमाने साधु के आचार-कल्प प्रमाने जो जिन मार्ग की य साधुधर्म की रीति है उस प्रमाने जिस प्रकार भगवतने कही है उस प्रमाने यथावध्य सम्यक प्रकार से अपनी काया करके स्वर्ण उपयोग युक्त पालनकरे, अविचार नहीं लगने देवे शुद्ध करे, जिस भाव से ब्रह्म की उस ही भाव से पार परोचारे, कीर्ति युक्त आराधे वाले इस प्रकार आराधन कर जिनाम्ना का अनुपासक रहे। इति प्रथम प्रतिमा प्रतिष्ठा विधी॥ अब दो महिने की साधु की प्रतिमा प्रतिपन्न हुवे साधु सदैव अपने शरीर को बोसीराकर अर्थात् शरीर की ममत्वका नागकर याचने दो दाति आहारकी और दो प्रति पानीकी ग्रहणकरे और विषी सब पूर्वोक्त एक महिनेकी प्रतिमा भेसी ही जानना तीन महिने की प्रतिमा की विधि भी ऐसी ही जानना जिस में इतना विच्छेप तीन दाति आहार की तीन दाति पानी की ग्रहण करे ऐसे ही चौथी बार महिने की प्रतिमा में चार दाति आहारकी और चार प्रति पानीकी ग्रहणकरे ऐसे ही पांचवीं पांच मासकी प्रतिमा में पांच दात आहारकी और पांच दात

यस्मिन्ना लगद्वाइयस्सत्ता ठक्कडुयस्सत्ता ठाण ठाइच्चए सेसं तंचेव जाव आणाए अणुपा-
लत्ता भवइ ॥ २४ ॥ एवं तथा सत्तराइदियावि भवति तंचेव णवरं गोवोहियाएवा,
वीरसणियस्सत्ता अयखुब्बियस्सत्ता ठाणठाइच्चए, सेस तंचेव जाव अणुपालेत्ता भवति
॥ २५ ॥ एवं अहोराइदियावि णवरं छट्टेण भत्तेण अपाणएण बहिया गामस्सत्ता

का तीन प्रकार के आसन करे उन के नाम—१ दंडासन दंड की तरह मलम्ब ऊर्ध्व बाह्य कर खड़ा रहे
२ म्गाढासन बाँके लकड़ की तरह पाँवों की एही और मस्तक का शिखा [चोटी] स्थान जमीन को
जगा सब शरीर भस्म रखे ३ ठक्क आसन-दोनों घुटने के बीच मस्तक को स्थाने दोनों घुटन
मस्तक से ऊपर निकले हुये, इस प्रकार ध्यानस्त रहे शेष विरि पूर्वोक्त प्रकार जानना यावत् आश का
भनुपालक होने रहे यह नववी प्रतिमा ॥ २४ ॥ ऐसे ही तीसरी प्रतिमा भी सात अहो रात्रि की
भिस में इतना विशेष रात्रि को तीन प्रकार के आसन करे लघया—१ गार्द आसन-गाय का दृष
दोने के लिए जिस प्रकार पाँवों पर बैठते हैं वैसे बैठे रहे २ वीरासन-पाँव जमीन पर रख पाट पर बैठे
चट पाट निकाल ले उस ही आसनसे रहे, और ३ अंबुजासन भव्यफल की तरह किसी सूटी आदि का
प्रवन्धन कर सग शरीर को भस्म रखकर रहे शेष तैसे ही यावत् आश का अनुपालक होने यह दशवी प्रतिमा २५ ॥
पुसेवी इयाग्वी भस्मरात्रि की प्रतिमा जानना भिस में इतना विशेष-छट्टमस्त(वेले)का तप करे वेले के दिन

तण उवसगा पयनिज्जवा पवेहेज्जवा नो से कण्हइ पयिच्छिच्चएवा पवठिच्चएवा ॥
 मत्थ उच्चार पासवण उवाहिज्जा, नो स कण्हइ उच्चार पासवण उगिण्हेत्तएवा ॥
 कण्हइ स पुज्ज पठिलेहिंयसि थंडिलसि उच्चारपासवण पारंठाविच्चए, अहाविहिंमेव
 ठाणट्ठाइत्तएवा, एव खलु एसा पढमा सत्तराइदिया भिक्खु पढिमा, आहासुत्त जान
 आणाए अणुपालेत्ता भवन्ति ॥ ॥ २३ ॥ एवं दोषा सत्तराइदियावि, णवर दंडाइ

२३ ॥ रा सम्बन्धी मनुष्य सम्बन्धी या विर्यच सम्बन्धी उपसर्ग उत्पन्न होते उन उपसर्ग से हरकर स्वस्थान
 २३ ॥ चलायमान नहीं होवें जिस प्रकार कायोत्सर्ग कर रहे हैं उस कायोत्सर्ग को पारे नहीं इस प्रकार
 २३ ॥ क्षान्तसे चम्पना और कायोत्सर्ग का पारना उन प्रतिमा धारिको कल्पता नहीं है वो उनको बदीनीत लघुनीत की
 २३ ॥ द्या होवे हो उस को रोकनी भी नहीं कल्पता किन्तु प्रथम जो मूर्धिका प्रतिलिख कर रत्नीहो उस स्थान बदी
 नीत लघुनीत की बाधा से निर्बर्तन होवे, उसे परिठावे, उस से निर्वर्तने बाद प्रथम जिस आसन से कायोत्सर्ग
 कर गीस्थित वे उस ही आसन से संस्थित होवे इस प्रकार सात अक्षराणि पर्यंत करे यह प्रथम सात अक्षो रात्रिकी
 रात्रवी प्रतिमा मानना, इस मूर्धोक्त विधी प्रमाने आराधे यावत् जिनाइ का अनुपासक आरापक होवे, यह
 आठवी प्रतिमा ॥ २३ ॥ इस प्रकार ही, दूसरी सात अक्षराणि की प्रतिमा उस में इतना विच्छेद रात्रि

यस्सना लगडाइयस्सवा उधाडुयस्सना ठाण ठाइचए सेस तंचेव जाव आणाण अणुपा
लत्ता भवइ ॥ २४ ॥ एवं तच्चा सत्तराइदियावि भवति, तंचेव णवरं गोदोहियाप्पवा,
वीरासणियस्सत्ता, अंबखुब्बियस्सत्ता ठाणठाइचए, सेस तंचेव जाव अणुपालेत्ता भवति
॥ २५ ॥ एवं अहोराइदियावि णवरं छट्टेण भत्तेण अपाणएण बहिया गामस्सत्ता

का तीन प्रकार के आसन करे उन के नाम—१ दंडासन दंड की तरह प्रलम्ब ऊर्ध्व बाह्य कर लदा रहे
२ स्वगडासन बाँके लकड़ की तरह पाँवों की एड़ी और मस्तक का शिखा [चोटी] स्थान जमीन को
स्पर्श सब शरीर अधर रख रहे ३ उक्क आसन दोनों धुने के बीच मस्तक को स्थाने दोनों धुने
मस्तक से ऊपर निकले हुये, इस प्रकार ध्यानस्त रहे शेष विधि पूर्वोक्त प्रकार जानना यावत् आज्ञा का
अनुपालन होवे रहे यह नववी प्रविष्टा ॥ २४ ॥ ऐसे ही तीसरी प्रविष्टा भी सात अहो रात्रि की
भित्त में इतना विशेष रात्रि को तीन प्रकार के आसन करे तदथा—१ गादूह आसन-गाय का दूध
दोने क लिंग जिष्ठ प्रकार पाँवों पर घेतवे हैं वैसे बैठे रहे २ वीरासन-पाँव जमीन पर रख पाट पर
गढ़ पाट निकाल ले उस ही आसनसे रहे, और ३ अंबखुब्बासन अम्यफल की तरह किसी खुदी आदि का
प्रत्यम्बन कर सय शरीर को अधर रखकर रहे शेष तैसे ही यावत् आज्ञा का अनुपालन होवे यह दशवी प्रविष्टा २५ ॥
पंचमी इगारची अंगारोपि की प्रविष्टा जानना भित्त में इतना विशेष-छट्टभक्त (वेम्बेक्ता) तप करे झेले के लिन

तत्र उवसग्गा पर्यनिज्जवा पवहेज्जवा नो मे कण्ह पयिच्छिच्चएवा पवहिच्चएवा ॥
 तथ उच्चार पासवण उवाहिज्जा नो मे कण्ह उच्चार पासवण उगिण्हेच्चएवा ॥
 कण्ह से पुब्ब पडिलेहि यसि यडिलंसि उच्चारपासवण पारिठाविसए, अहाविहिमेव
 ठाण्ठुइच्चएवा, एव खलु एसा पढमा सचराइदिया भिक्खु पढिमा, आहासुच जव
 आणाए अणुपालेणा भवन्ति ॥ २३ ॥ एव दोष्ठा सचराइदियावि, जवर देढाइ

२३ ॥ राग सम्बन्धी मनुष्य सम्बन्धी या विर्यच सम्बन्धी उपसर्ग उत्पन्न होते उन उपसर्ग से इतरकर स्वस्थान
 २४ ॥ चलायमान नहीं होते जिस प्रकार कायोत्सर्ग कर रहे हैं उस कायोत्सर्ग को पारे नहीं इस प्रकार
 २५ ॥ आसन से चम्पना और कायोत्सर्ग का पारना उन प्रतिमा शरीर को कल्पना नहीं है जो उनको बहीनीत लघुनीत की
 २६ ॥ पड़ा होते तो उस को रोकनी भी नहीं कल्पता किन्तु प्रथम जो भूमिका प्रतिस्व कर रही हो उस स्थान बही
 २७ ॥ नीत लघुनीत की बाधा से निवर्तन होते, उसे परिठाने, उस से निवर्तने बाद प्रथम जिस आसन से कायोत्सर्ग
 २८ ॥ का स्थित है उस ही आसन से संस्थित होते इस प्रकार सात अक्षोरानि पर्यंत करे यह प्रथम सात अक्षोरानि की
 २९ ॥ आत्मीय प्रतिमा मानना, इसे सूक्ष्मेक विधी प्रमाने आराधे यावत् जिनाइ का अनुपालक आराधक होते, यह
 ३० ॥ आठवी प्रतिमा ॥ २३ ॥ इस प्रकार ही, दूसरी सात अक्षोरानि की प्रथमा उस में इतना विद्येय राशि

यम्भया लगडाइयस्सया उक्कहुयस्सया ठाणं ठाइच्चए सेस तंचेव जाव आणाण अणुपा
लेत्ता भयइ ॥ २४ ॥ एवं तच्चा सत्तराइदियावि भवति, तंचेव णवरं गोदोहियाएवा,
त्रीगसणियस्सया अब्बुजियस्सया ठाणठाइच्चए, सेस तंचेव जाव अणुपालेत्ता भवति
॥ २५ ॥ एवं अहोराइदियात्रि णवरं छट्ठेण भत्तेण अपावण्ण बहिया गामस्सया

का तीन प्रकार के आसन करे उन के नाम—१ वंदासन वंद की तरह प्रलम्ब ऊर्ध्व बाहा कर खड़ा रहे
२ लगडासन पाँके लक की तरह पाँवों की एड़ी और मस्तक का शिखा [बोटी] स्थान जमीन को
लगा सब शरीर भयर रख रहे ३ उक्कहु आसन-दोनों घुटने के बीच मस्तक को स्थापित दोनों घुटने
मस्तक से ऊपर निकले हुये, इस प्रकार ध्यानस्थ रहे भेष विधि पूर्वोक्त प्रकार जानना यावत् आज्ञा का
प्रनुपायक होवे रहे यह नववी प्रतिष्ठा ॥ २४ ॥ ऐसे ही तीसरी प्रतिष्ठा भी सात अहो रात्रि की
भिस में इतना विशेष रात्रि को तीन प्रकार के आसन करे तथया—१ गद्दई आसन-नाय का दृष्ट
दोने के लिंग भिस प्रकार पाँवों पर बैठते हैं वैसे बैठे रहे २ धीरासन-पाँव जमीन पर रख पाट पर बैठे
रह पाट निकाल ले इस ही आसनसे रहे, और ३ अंबुजुआसन अम्बुफल की तरह किसी खुदी आदि का
प्रवटम्बन कर सब शरीर को भयर रखकर रहे भेष तैसी ही यावत् आज्ञा का अनुपालक होवे यह दशवी प्रतिष्ठा २५ ॥
पेंसेही इयाग्वी भद्रारात्रि की प्रतिष्ठा जानना भिस में इतना विशेष-दृष्टमक्त (बैबे) का तप करे बेले के दिन

नण ठवसगा पर्यानिजवा पवेहेज्जश नो से कण्यइ पयिच्छिचएवा पवडिचएवा ॥
 नथ उच्चार पासवण उवाहिज्जा, नो से कण्यइ उच्चार पासवण उणिण्हेचएवा ॥
 कण्यइ स पुब्ब पडिलेहियंसि थंझिलंसि उच्चारपासवण परिठापिचए, अहाविहिमेव
 ठाणट्ठइचएवा, एव खलु एसा पढमा सत्तराहदिया भिक्खु पडिमा, आहासुच जाव
 आणाए अणुपालेष्ठा भवति ॥ २३ ॥ एवं दोषा सत्तराहदियावि, एवरं दढाइ

देगा सम्बन्धी मनुष्य सम्बन्धी या विर्यच सम्बन्धी उपसर्ग वत्पब होवे उन उपसर्ग से हरकर स्वस्यान
 रे चन्दायमान नहीं होवे जिस प्रकार कायोत्सर्ग कर रहे हैं उस कायोत्सर्ग को पारे नहीं इस प्रकार
 आसनसे चम्बना और कायोत्सर्ग का पारना उन प्रविमा पारिको कल्पता नहीं है जो उनको बढीनीत लघुनीत की
 याया होवे तो उसको रोकनी मी नहीं कल्पता किन्तु प्रथम जो मृष्टिका प्रविलिख कर रसीहो उस स्यान बढी
 नीत लघुनीत की बाया से निर्वर्तन होवे उसे परिवावे, उस से निर्वर्तने याद प्रथम जिस आसनसे कायोत्सर्ग
 कर गस्थित थे उस ही आसनसे सीस्थित होवे इस प्रकार सात अहोरात्रि पर्यंत करे यह प्रथम सात अहो रात्रिकी
 आत्री प्रविमा जानना, ऐसे सूत्रोक्त विधी प्रमाने आराधे याषट् जिनाज्ञा का अनुपालक आरापक होवे, यह
 ग्राहवी प्रतिमा ॥ २३ ॥ इस प्रकार ही, दूसरी सात अहोरात्रि की प्रतिमा उस में इतना विदेव रात्रि

यस्य लगडाइयस्य उवाडुयस्य ठाण ठाडचए सेस तंचेव जाव आणाए अणुपा-
लचा भयइ ॥ २४ ॥ एनं तथा सत्तरादियानि भवन्ति तंचेव णवरं गोदोहियाण्या,
त्रीगसणियस्सया अंबलुवियस्सया ठाणंठाडचए, सेस तंचेव जाव अणुपालेचा भवति
॥ २५ ॥ एवं अहोरादियानि णरं छट्ठेण मत्थेण अपाणएण वत्तिया गामस्सया

का तीन प्रकार के भ्रातन करे उन के नाम—१ दंदासन दंड की तरह प्रलम्ब ऊर्ध्व घाहा कर खड़ा रहे
२ लगढोलन बंके लकड़ की तरह णवों की एही और मस्तक का शिखा [चोटी] स्थान जमीन को
तथा राग शरीर भ्रमर रत्न रहे ३ उकड़ आसन-योनो गुटने के बीच मस्तक को स्थाने दोनों गुटन
मस्तक से ऊपर निकले हुये, इस प्रकार ध्यानस्त रहे शेष विधि पूर्वोक्त प्रकार जानना यावत् भ्राता का
प्रनुपालन होने रहे यह नववी प्रतिमा ॥ २४ ॥ ऐसे ही तीसरी प्रतिमा भी सात अहो रात्रि की
भिस में इतना विशेष रात्रि को तीन प्रकार के आसन करे वयथा—१ मदूह आसन-गाय का द्रुप
दान २ लिंग जिस प्रकार णवों पर बैठते हैं वैसे बैठे रहे २ वीरासन-पाँव जमीन पर रत्न पाट पर बैठे
३ पाट निहाल ले उस ही आसनसे रहे, और ३ अंबलुजासन अम्बफल की तरह किसी सूंरी आदि का
प्रचण्ड चक्कर सय शरीर को घघर रखकर रहे शेष ऐसे ही यावत् भ्राता का अनुपालन होने पर दशवी प्रतिमा २५ ॥
पुंसेही दयागवी भ्रातागि की प्रतिमा जानना जिस में इतना विशेष-छट्ठमक्त(वेले)का सग करे वेले के तिन

जाव रायहाजिस्सवा, ईसिं दोत्रि पाः साहदु वग्घारिय पाणस्स ठाण ठाइच्च०, सेत्तं
सेत्तं जाव अणुपालेत्ता भवइ ॥ २६ ॥ एग राइयण भिक्खुपट्ठिम पट्ठिवमस्स
अणगारस्स निच्च योसट्ठकाएण जाव अहियासेइ, कण्हसे अट्ठमेणं मत्तेण अपागएण
बहिंया गामस्सवा जाव रायहाजिस्सत्ता ईसिपग्गारगएण काएणवा एगपोगलगयाए
विट्ठुए अणिमिस्तिनयवे महापणिहिंइहिं गाएहिं सत्तिंवादेएहिं गुत्ते दोत्रिपाए साहदु,

प्राणादि क बाहिर कुछ भन्तर से ध्यानस्थ रहे (आगे अंगुल पीछे अंगुल भन्तर रख) पाँव एकत्रकर दोनों हाथ लम्बे रख शरीरके आश्रयविना अपर रख कोयत्सर्ग करे शेष विधि वैसे ही जानना यावत् आकाशका अनुपालक होने यह इग्यारवी प्रविमा ॥२५॥ बारवी श्री एक रात्रि और दिनकी भिष्टुक की प्रविमा प्रतिपन्न हुवे सातु शरीर का दमस्व का लागकर यावत् सर्व परिपक्व सम्पक् प्रकर से सहन करते हुवे अष्टम भक्त [तेले] का तप पानी बिना चौबिहार करना कल्पता है वे ग्राम के यावत् राजधानी के बाहिर [स्वज्ञान में] योगीसी कायाको मुकाकर कायोत्सर्ग करे एक ही पुङ्ख [वस्तु] पर अनिमेष [ओलो नही ट्यकारहे] दृष्टी स्थापन करे यथा प्रणित गात्र-शरीर को सब इन्द्रिय पाँचों इन्द्रिय और मन को गुप्त करके दोनों पाँवों को उक्त प्रकार स्थापनकर दोनों हाथोंको निराधार प्रलम्ब स्थापन कायोत्सर्ग पुक्त स्वहे रहे । यहाँ देवना सम्बन्धी, मनुष्य सम्बन्धी न निर्यस सम्बन्धी तीन प्रकारके परिपक्व उपपन्न नित्यक होने उन

अग्घात्तिय पाणिस्स ठाणं ठाइत्तए, तत्थण देवमणस्स तिरिक्खजोणिया जाव अहा विहिमेव,
ठाणं ठाइत्तए ॥ २६ ॥ एगराइयण भिक्खुपडिम अणणुपोलमाणस्स अणगारस्स
इमेतउठाणा, अहियाण असुमाण अखमाण अणिस्ससाए, अणणुगामिय
त्ताए भवइ, तजहा उमायवा लभेज्जा, दीहकालियवा रोगायक पाठणेज्जा, केवली पण्णत्ताओ
धम्माओ भेज्जिन्ना ॥ एगराइयं भिक्खु पडिमं सम्मं अणुपालेमाणस्स अणगारस्स इमे
तओठाणा हियाए जाव अणुगामियत्ताए भवइ तजहा-ओहिणाणेवा समुप्पजेज्जा,

को यावत् पूर्वोक्त प्रकार सम्यक् प्रकार सहन करे, इस प्रकार कार्योत्सर्ग युक्त एक रात्रि के मिश्रक की प्रतिमाका प्रागधनकरे यावत् आमाका अनुपालक होवे यह बारही मिश्रक की प्रतिमा॥२६॥जो इस बारही प्रतिमाका प्रागधनकरे नहीं करते हैं उपसर्ग उत्पन्न हुवे चलित होते हैं उनको आगे कहेंगे सापुत्री प्रतिमाका सम्यक् प्रकार आराधन नहीं करते हैं उपसर्ग उत्पन्न हुवे अनुगामिहोवे, ध्वसे अहित केकरता अयुध केकरता अयोग्यता केकरता अनिस्तार केकरता आगामिक काल में अनुगामिहोवे, उन के नाम—१ दम्माद प्राप्त होते अर्थात् वावसे बने, २ श्रुत काल तक रहे ऐसा महा रोग की प्राप्ति होते, और ३ केवली प्रणित संयम पर्यं से मृष्ट होते और जो बारही एक रात्रि की साधु की प्रतिमा दे उसे सम्यक प्रकार से आराधन करेगा जिनाशा प्रमाण पालेगा उन को आगामिक काल में तीन स्थानक दित के करता धुम केकरता समाकेकरता यावत् आगामिक काल में अनुगामिक होयेंगे उन के नाम—

जात्र रायहाणिस्मत्वा, ईसिं दोत्रि पाए साहदु अघारिय पाणस्स ठाणं ठाइएण, सेस
तचेव जात्र अणुपालेसा भवइ ॥ २६ ॥ एग राइयण भिक्खुपट्ठिमं पडिवसरस
अणगारस्स निच्च वासट्ठकाएण जात्र अहियासेइ, कण्णइसे अट्टमेण भत्तेण अपाअएण
चहिया गामस्सवा जात्र रायहाणिस्सवा ईसिपब्भारगाएण काएणवा एगपोगलगयाए
दिट्ठीए अणिमिसिनयेगे अट्ठापणिहिएहिं गाएहिं सत्तिवाविएहिं गुत्ते दोविपाए साहदु,

प्राभादि क बाहिर कुछ अन्तर से ध्यानस्थ रहे (आगेऽर्धगुल पीछेऽर्धगुल अन्तर रख) पाँव एकत्रकर दोनों हाथ लम्बे रख शरीरके आश्रयविना अथर रख कायुत्सर्ग करे छेप विधि तैसे ही जानना यावत् आवाका अनुपालक होने यह इग्यारवी प्रविमा ॥२५॥ बारवी मी एक रात्रि और दिनकी भिष्टक की प्रतिया प्रतिपन्न हुवे साधु शरीर का समत्व का सागकर यावत् सर्व परिषद सम्पद प्रकार से सहन करते हुवे अष्टम भक्त [तेले] का तप पानी बिना चौविहार करना कल्पता है वे ग्राम के यावत् राजपानी के बाहिर [स्वदान में] घोड़ीसी कायाको झुकाकर कायोत्सर्ग करे एक ही पुद्गल [बस्तु] पर अनिमेष [अलौ नही टमकागते] छठी स्थापन करे यथा प्रणिता गात्र-शरीर को सब इन्द्रिय पाँचों इन्द्रिय और मन को गुप्त करके दोनों पाँचों को ब्रह्म प्रकार स्थापनकर दोनों हाथोंको निराधार प्रलम्ब स्थापन कायोत्सर्ग युक्त स्थे रहे ! वहाँ देवता सम्बन्धी मनुष्य सम्बन्धी व तिर्यच सम्बन्धी तीन प्रकारके परिषद तपसर्ग उत्पन्न होने न

यघारिय पाणिस्स ठाणं ठाइत्तए; तत्थण देवमाणस्स तिरिक्खजोणिया जात्र अहा विहिमेव-
 ठाणं ठाइत्तए ॥ २६ ॥ एगराइयण भिक्खुपडिमं अणणुपालमाणस्स अणगारस्स
 इमेतउठाणा, अहियाए असुभाए अखमाए अणस्ससाए अणणुगामिय-
 चाए भवइ, तजहा-उमायंथा लभेज्जा, दीहकालियं रागायक पाठणेज्जा, केवली पणत्ताओ
 धम्माओ भंसेज्जा-॥ एगराइयं भिक्खु पडिमं सम्मं अणुपालमाणस्स अणगारस्स इमे
 तओठाणा हियाए जाव अणुगामियचाए भवइ तजहा-ओहिणाणेवा समुप्पज्जेज्जा,

को यावत् पूवाक प्रकार सम्यक् प्रकार सहन करे, इस प्रकार कार्योत्सर्ग पुक्क एक रात्रि के भिक्षु की
 प्रतिमाका भागपनकरे यावत् आग्राका अनुपालक होवे यह बारवी भिक्षु की प्रतिमा॥ २६॥ ओ इस बारवी
 साधुकी प्रतिमाका सम्यक् प्रकार आरापन नहीं करतौ उपसर्ग उत्पन्न हुवे चलित्र होतैं हैं वनको आगे कहेंगे
 वैसे प्रहित केकरता अयुम केकरता अयोग्यता केकरता अनिस्तार केकरता आगाभिक काल में अनुगामिहोवे,
 उन के नाम— १ उन्माइ प्राप्त होवे अर्थात् वाक्से बने, २ धुत काल तक रहे ऐसा महा रोग की प्राप्ति
 होवे, और ३ केवली प्रणिउ संयम धर्म से भ्रष्ट होवे और जो बारवी एक रात्रि की साधु की प्रतिमा
 २ उमे सम्यक् प्रकार से आराधन करेगा जिनाया प्रमाने पावेगा उन को आगाभिक काल में तीन
 स्थानक दित के करता धुम केकरता सप्ताकेकरता पावत आगाभिक काल में अनुगामिक होवेंगे उन के नाम-

॥ अष्टमी-दशा ॥

तेने कालेने तेज्य समये भगवं महावीरं पंचहरयुधरे होत्था तजहा हत्युचराहिं
बुधचइना, रागभवकते ॥ १ ॥ हत्युचराहिं गम्भाभोगम्भ साहरिषए ॥ २ ॥

हत्युचराहिजाए ॥ ३ ॥ हत्युचराहिं मुढे भविषा अगाराओ अणगारिय पन्वइए

॥ ४ ॥ हत्युचराहिं अणते अणुचरे निन्वाधाए निरावरणे कसिणे पडियुज्जे

अब आठवा अध्ययन पद्यावीर स्वामी के जीवन परिचित्र का कहते हैं—उस काल उस समय में अमल मग-
धैव पद्यावीर स्वामी के पांच काम हत्योचरा [उचराफालुनी] नक्षत्र में हुवे जन के नाम—१ हत्योचर
नक्षत्र में दृष्टवे देवलोका से जबके देवानंदा ग्रामणी के कूल में अबतगे २ हत्योचर नक्षत्र में ही देवानंदा
की कूली से त्रियासीयी रात्रि में साहरणकर श्रीसलवेवी लक्ष्मीयानी की कूल में हरिण मयेपी देवने स्थापन
किये, ३ हत्योचर नक्षत्र में ही अन्य हुवा, ४ हत्योचर नक्षत्र में ही दृढ मकर सुम्बिद हो गृहस्थाबाध
छोड अनगार-सातु हुवे और ५ हत्योचर नक्षत्र में ही अनुचर निर्व्यापाव निरावरण कूल (अलंढ)

गरी-बहुत उमगा-ये. अठ मीने के ८ मास करत के बिहार और पार मीने एक स्थान कोमसे के काम यदने
न मिस में करत होने से गुसगान्याव भी प्रस का काम कहा है आधार कल होने से आधार करत भी इस मध्यम का
नाम कहा है, (और कहते हैं कि-कल मूत्र का भी इसी में सम्योवेश होगा है.)

इस के गिने का और गम्यता के उत्तर दिशा में योग करना होनेसे हत्योचर नक्षत्र कहा है

मणपञ्च पाणेवा समुप्यजेज्वा केवल्पाणेवा असमुप्यजेयुन्वे समुप्यजेज्वा, एवं
खलु एसा एगाराइया भिक्खु पढिमा अहासुच अहाकप्य अहामरग अहास्तच्च सम काएण
फासिचा पालिचासोहिचा नीरिचा कीहिचा आराहिचा आणाए अणुपालिचा भवति
॥ २७ ॥ एताओ खलु साओ थेरोहि भगवतोहि चारस्स भिक्खु पढिमा पणत्ताओ॥
चियेभि ॥ २८ ॥ इति भिक्खु पढिमाणाम सत्तमं वसा सम्मत्त ॥ ७ ॥

१ अत्रापि ज्ञान की प्राप्ति होने २ मन्-पर्यन्त ज्ञान की प्राप्ति शर, और ३ केवल ज्ञान जो उनको प्रथम प्राप्त नहीं हुआ है, उस की प्राप्ति होने यों निश्चय यह एक रात्रि की मिथुन की प्रतिमा सूत्रोक्त विधी प्रयोजने साधु के कल्प प्रदाने न्याय मार्ग नमाने, यथातथ्य सम्बन्ध प्रकार काया करके आराधने, पालने, स्पर्शने करे आविष्टार रहित विद्युद् धातु, फाल्गुन शार पर्वोत्थावे, कीर्ति सहित आराधने आद्या की अनुपात्तक होवे ॥ २८ ॥ यों निश्चय अग्रे अम्भू ! स्वधिर प्रगल्बने धारे मिथुन की प्रतिमा करी तैसी मने तेरे से करी इति मिथुन प्रतिमा नामक सातवीं दृष्टा संप्राप्त ॥ ७ ॥

॥ नवमी-दशा ॥

तेणे कालेणं तेणं समण चपानाम नयरी होत्या वण्णओ, पुण्णभदे चेइए, कोणिए राया धारणीदेनी साधीसमोसडे, परिसा निगया, धम्मोक्खिओ, परिसापडिगया ॥ १ ॥ अओ ! नि समणे भगवं महागरे वहने निगयाय निगंधीओय आमतेचा एव नयासी लं खटु अओ ! तीस मोहणिज्ठाणाइ जाइ इमाइ इत्थिओगा पुरिसोवा अमि वट्ठर्ण = आयरमाणेवा समायरमाणेवा मोहणिज्चाए कम्मपकरोति, तंजहा (गाहा) जे

उस-काल उम समय में चंपा नामकी नगरी थी उसके ईशान कौन में पूर्ण भद्र नामक वणिषा या, यही कोणिङ नामका राजा राज करता था उनकी धारणी नामकी राणी थी वहां भगवत श्री महावीर स्वामी पैपारे, परिपदा धनने गर, धम कथामुनाइ, परिपदा पीछीगइ इन सध को वर्णन उवायइ मंत्र से मानता ॥ १ ॥ भरो भायों ! इस प्रकार-प्रमण भगवत श्री महावीर स्वामी साधु साखी को भगवणकर बोलकर यों करते हुये-यों निमय भरो आयों तीस स्थान मोक्षम उपार्जन करन के कहे इ, भगवणकर यों जा कोई ही अथवा पुरुष धारम्यार आचरन करते इ, विशेष प्रकार धर्माचरते इ वे महा जिन को जा कोई कर्म का धंध करते हैं उन्हें-मीन कर्तव्य के नाम आगे गाथा द्वारा करते इ तथया—१ जो मोक्षनीय कर्म का धंध करते हैं पुत्रोकर अथवा किसी भी प्रकार पानी के प्रयोगकर मारता इ वह महा कोई व्रत वाणी को पानी में पुत्रोकर जो कोई प्राणियों के हान कर वधकर या किसी भी प्रकार मोक्षनीय कर्मापार्जन करना है ॥ १ ॥ २ जो कोई प्राणियों के हान कर वधकर या किसी भी प्रकार

कचलवर णाणदमण समुपपण ॥ ५ ॥ माइथायारेनिव्वुए मयव ॥ ५ ॥ जाव बहुण
 समणण धनुण समणाण, धनुणं सावयाणं, बहुणसावियाणं बहुणदेवाण, बहुण देवाण
 मज्झिमाएवैव पवमाइनखइ एव भासेसेति एव पणववइ एवं पल्लवइ जाव मुज्झो २ एव
 ठववसेइ सिधेदि ॥ आयाकण्णामट्टमअयण समन्ता ॥ ८ ॥

श्रुतिपूर्ण प्रधान केवल ज्ञान केवल दर्शन की प्राप्ति हुई यह पांच कार्य तो हररोधर नरेश में हुए और
 १. स्वार्ति नरेश में निर्वाण-मोक्ष पणारे पाकष्ट उच्छेद से आधारीग मूत्र के १५ वा अध्याय का समाप्त
 यहाँ संपूर्ण करना अर्थात् इस उत्सर्पणी काल के तीन बार पीने चाये आरे के ७५ वर्ष ८॥ मरिने रहे
 तब मयदेश को दशक देबलोह से सबकर बीच नाम कर्मोदय से देवानदा ब्राह्मणी की कृपा में अवसरे
 उहाँ ८८ सात्र रहे त्रियासीने प्राप्ति को हिरण्यवैसी वेब इन्द्र के आदेश से देवानद की कृपा में अवसरे
 भीसमादेनी तर्षायानी कृती में स्वाये सभा नव मरिने पूरे हुये जन्म हुआ, चौसठ इन्द्र जन्मोत्सव किया
 इष्य होद होनेसे छदिमान और महापराक्रमी होने से मरुतीग नरेश स्थापा, १८ वष बाद मातपिता स्वर्ग गये
 दो वर्ष अधिग्रहपारी रह, वर्षीयान द ३० ईप की वर्ष में दीसा ली १०॥ वर्ष छपस रह, फिर केपन
 ज्ञान पाये, कुच्छम ३० वष करली रहे, यावत् बहुष साधु साध्वी आधक आविका देवता देवी की परिपदा के
 पुष्य पांच मासत्र की २५ यावना रुद्र अध्याय प्रापा प्रकृता ५० दिन भाष- सवस्मरी ७०० दिन बाद
 घौमासा की समोही करी, सब वर्ष मापुष्य योगकर योगपथारे इत्यादि सब करना इति आठवी दशास्यूर्ण ॥८॥

दंडेण, महामाहं पकुब्बइ ॥ ९ ॥ गूढाचारी निगूहेजा, मायमायाए नायए ॥ असब्ध
 वाईणिण्ह्वाइ, महामोहं पकुब्बइ ॥ ७ ॥ धसेइ जोअमूर्ण, अकम्मं अंतकम्भुणो,
 अदुवा नूम मकासिचि, महामोहं पकुब्बइ ॥ ८ ॥ जाणमाणो परिसए, सच्चमोसाइ
 भासए ॥ अरलीणसंसे पुरिसे, महामोहं पकुब्बइ ॥ ९ ॥ अणायगस्सणेयव्व, दार
 त्तिमाव तथा बीमादि के फलकर दंडे कर फयर आदि कर उस को मारे तो मरा मोहनीय कर्म बंधे
 ॥ ९ ॥ जो कोई आचारी नाम पराकर गुप्तपने उनाचार सेवन करे उस को छिपा कर रखे अपने
 दगलबानी कर उसे इके-अच्छादन करे असत्य वचन उबारे छाछ के अर्थ छिपावे तथा फिरावे अनर्थ
 रूप परिमावे अथाए उल्लस की प्रकृपना करे मर मरा मोहनीय कर्म बंधे ॥ ७ ॥ जो कोई किसी गुनीजन
 का यह प्रामादि में बिस्तरित हो रहा है उसे श्रवण कर ईर्ष्या भाव से प्रज्वलित हो वह धर्माथे किसी
 काय को करता हो उस का झूठा भरम रखकर उस यथःक्य निवारन करने अपयत्न फैलाने जो कोई
 पुरुष असद्वृत्त झूठा कलंक (धम्मा) उस पर चढ़ावे अनाचार नहीं सेवन करनेवाले को भी अनाचार
 से न निम्ना पतावे भयना अपने किये हुये कुठमों उसने किये पेक्षा कर अपना दोष अन्यपर स्थापन करे
 तो वह मरा मोहनीय कर्म बंधे ॥ ८ ॥ जो जानता है कि यह बात साफ झूठी है तो भी परिषदा में बैठ
 कर भित्र भाषा बोले अर्थात् सत्य घट का निर्णय न हो ऐसी भाषा बोले झूठ वचन उबार कर लेख की
 जा. करे वह मरा मोहनीय कर्म बंधे ॥ ७ ॥ जो कोई राजा का प्रधान, धेठ का मुनीय

यात्रितसेपाने, वारि० अ० वि० ग० हि० ॥ ८४ ॥ १ ॥ नो कम्ममारइ, महामाहं पकुव्वइ ॥ १ ॥ पाणिपासं पि
 दिष्णं, सोयमात्ररिय पाणीणं ॥ अंतोणयंत मारेइ, महामोहं पकुव्वइ ॥ २ ॥
 जाय तेयं ससारंभे, बहुउत्तमियाजण ॥ अंतो धूमेण मारेइ ॥ महामोहं पकुव्वइ
 ॥ ३ ॥ सीसंभि जो पहाणेइ, उचिमगंमि वेयसा ॥ विमज्जमत्थरां फाले, महामोह
 पकुव्वइ ॥ ४ ॥ सीसंवेटेण जेकेइ, आवेटेइ अभिक्खणं ॥ सिव्वसुहं ससायारे,
 महामोहं पकुव्वइ ॥ ५ ॥ पुणो २ पणिहिण, धालेउववहसेजणं ॥ फलेण अदुव

कर ओवादि गन्धियों द्वारा निकलता भावोपास का निरूपण कर हृदय में पुन पुन उनाट करता हुआ मारे
 वह महायोगीनीय कर्म बंधे ॥ २ ॥ २ जो कोई अस्मिन्नाय का संप्रदाय करे जलनक्षयमान अभिक्खे प्रत्यक्षित
 करे वह वादादि में रहे जीवों का निरूपण कर उनके नाक मुल जीवों में भूबा प्रलेपकर मारे, वह यग,
 योगीनीय कर्म बंधे ॥ ३ ॥ ४ सब दुर्गिर में उत्तमोग जो कस्तक है उस समस्तक में कोई लज्ज का मालका
 आदि किसी भी वस्त्र का शरार करके प्रस्तक करे सोहकर सोहकर जो जीव मृत करे, वह महायोगीनीय
 कर्म बंधे ॥ ४ ॥ ५ जो कोई प्रस्तकादि घरीर में कथा [आत्म] बंधे वैष्टित करके प्रप्रादि
 में लडा कर मूक्य कर इस प्रकार किसी का बंध करे तो वह महायोगीनीय कर्म का
 बंधकरे ॥ ६ ॥ जो कोई वाचसे लूते लगे यादि भोगकी तथा वास अश्वानी मूलकी इसी प्रस्तकरीकरे वस्त्रको

महामाह पुण्ड्र ॥ १४ ॥ जणिसिओ उव्वहति, जससाअभिगमिणय ॥ तस्सलुप्पइ
 त्तिचमि महामोहं पुण्ड्र ॥ १५ ॥ इत्सरेण अदुवा गामेणं, अणित्सरेइसरिकए ॥
 तस्स मग्गिगहिइत्स, सिरीअ तुल मागया ॥ १६ ॥ इत्सा दोसेण आइठ्ठे, कटुसाउल

हता है १४ अज्ञानी जीव अपनी आत्माका अहित सम्पादन करता है, माया पृथक्कट युक्त झूठे वचनों
 गार कर बहुत बकबाद कर लोकों को ठगता है, स्त्री के विषय का लम्पटी होता है वह महा मोहनीय
 कम हो चैये ॥ १५—१६ ॥ १७ जो कोई जीव किसी राजा आदि महा पुरूष के प्रताप करके गुरु
 नादि महा पुरुष के प्रताप करके जगत में माननीय पूजनीय बना हो, वह पुन उन राजादि का वं गुरु
 आदि का ही प्रयत्न करे उन की पैठ प्रतीत गमानेका उपाय करे तो महामोहनीय कर्मका घट करे ॥ १५ ॥
 १६ जो कोई प्रथम अनिश्चर-निराश्रया, उसमें किसी राजादिने राजसत्ता देकर या घनादि देकर ईश्वर बनाया,
 वह समय धन जिन राजादि के प्रताप करके अतुल्य अपार लक्ष्मी वैभव सुख सम्पदा प्राप्त की
 भगता प्राप्त के लोभने उसे बुद्धिर्वत दस मानकर अपना मुलीया बनाया पंच स्थापन किया अनिश्चर
 का श्वर भ्रमस्थ की समर्थ किया, उनके प्रसाद से लक्ष्मी आदि अतुल्य सम्पदा प्राप्त की, फिर उस
 कृदिगर्भ में ऐश्वर्यता के गर्भ में छलकर अपने आश्रित अनोपर कलुषता भाव-द्वेषपृति कर तथा लोमादी
 दोषों से प्रेरित हो व्याकुल बन उन आश्रितों को दुःखदे प्राप्त उपजावे स्थान पान भोगोपभोग की

तस्तेवधसद ॥ विटलं विन्स्वाभइच्छाण, किच्छाण पठिवाहिरं ॥ १० ॥ उवसगतपि
ज्जिप्त्वा पडिलेमाहिबगुहि ॥ भोगभोगावियारेइ महामोहं पकुव्वइ ॥ ११ ॥
अवुमारमूर जेक्केइ कुमारे भुण्ति अहंवेदे ॥ इत्थीविसयं गेहिइ, महामोहं पकुव्वइ
॥ १२ ॥ अयंभयागी जेक्केइ, बभयारिचि अहंवेदे ॥ गइभेवगव मज्जे, विस्सरण
दइण्णंदे ॥ १३ ॥ अप्पणो अहिंयं चाले, मायामोसं बहुभसे ॥ इत्थीविसयं गेहीए
रात्ता शेठ उस पर बिश्वास कर उस को अपनी संपत्ति की मुस्त्यारी दी हो वह प्रपान तथा मुनीम
राजा की स्त्री को तथा धन को अपने साथे में कर व्रत को निराशा बनावे अपना तावेदार व
उस को फिर अनेक प्रकार दुःख देवे रुदन करावे प्रातिलोय नीच शब्द बोलकर उसे सताप उप
उस को योगयोग की अंतराय दे उस की वस्तु उस को भी भोगजन देव नहीं, वह महा मोहनीय
दे ॥ १०—११ ॥ जो काइ कुमारभूत न हो अथात् बाल ब्रह्मचारी न हो और लोकों में क
प कुमारभूत बाल ब्रह्मचारी है, इस प्रकार बोलता हुआ जो स्त्री के विषय में गृध्र हो स्त्री संग कर
महा मोहनीय रुम बंदे ॥ १० ॥ जो कोई कुशीमीय, व्यभिचार का सेवन करनेवाला होकर भी स्त्री
को कि मैं ब्रह्मचारी है, और ब्रह्मचारीयों की सम्मन्य में रहे वह जिस प्रकार गाय्यों के दोसे में
होता है उस प्रकार जानना अपने साधु के रूप को धर्म को लज्जित-शर्मित करनेवाला भिष्य

॥ २१ ॥ तद्देवाणतनापीण, जिणाण वररसिणं ॥ तस्मि अवसमाले, महामोह
पकुव्वइ ॥ २२ ॥ जेयाउयत्त मगस्स, पुट्ठे अवहरइ बहु ॥ ततिप्पयंतो भावेइ,
महामोहं पकुव्वइ ॥ २३ ॥ आयरिय उवज्झाएहिं, सुय विणय च गाहिए ॥ तंचेव
स्सिसइमाले, महामोहं पकुव्वइ ॥ २४ ॥ आयरिय उवज्झायाण, सम्म नो परितप्पइ ॥

अपडिपूयइ येहे, महामोहं पकुव्वइ ॥ २५ ॥ अबहुसुएविजेकेइ, सुएण परिकप्पइ ॥

जो ब्रह्मरूप अनंत केवल ज्ञान केवल दर्शन के धारक श्री ज्ञानेश्वर भगवान के अवलंबवाद बोले तो वह पूर्ण परामोहनीय कर्म बंधे ॥ २२ ॥ २० जो कोई दुष्ट बुद्धि का धारक ज्ञानेश्वर भगवत का न्यायपंथ निस्वार कारक धर्म तथा धर्म के परितक संयमिन् का अवलंबवाद बोले-निन्दा करे वह परामोहनीय कर्म बंधे ॥ २३ ॥ २१ जो वीक्षा श्रिता के दावा आचार्य भगवत का, ज्ञान विज्ञान के प्रवर्तक उपाध्याय भगवत का, कि जिनोने श्रुत धारिण का विनयाम्नास कराया हो न्याय पंथ में लजाया हो उन की शिक्षा करे, उन को स्तिसना करे, गुण बया आनते हो पोरै बधत बोल कर अपमान करे तो वह मोहनीय कर्म बंधे ॥ २४ ॥ २२ जो उक्त प्रकार के आचार्य उपाध्याय की आर्क्षारी बन कर अधीपान में उल्लंघन विनय भक्ति सेवा नहीं करे तो वह महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ २५ ॥ २३ जो कोई प्रबुद्ध सूत्री होकर अर्थात् नास्तार्थ के धार्य के धार्य हो कर अधीपान में उल्लंघन

षयसे ॥ जे अतरायचइए महामाह पकुवइ ॥ १७ ॥ सय्यजहा अंठपुढ, भवार
 जोत्रि हिसइ ॥ सेणावइ पसरथारं, महामोहं पकुवइ ॥ १८ ॥ जे षायगं वरटुत्स,
 नेत्तार निगमरस्सवा सेट्टुं च बहुरवहंती सेट्टुं, महामोह पकुवइ ॥ १९ ॥ बहु जणत्स
 नेशारं, दीव ताणच पाणीण ॥ पृतारिसं जरं इता ॥ महामोहं पकुवइ ॥ २० ॥ उव-
 ट्ठियं पढिविरय, सजयं सुसमाहिय ॥ विउक्कम्म धम्मा उभसेइ, महामोहं पकुवइ
 अउराय करेवो महामोहनीय कर्म का बये ॥ १६ १७ ॥ १५ जिस प्रकार सर्पनी अपने बदन करके
 आपसी उस का मसणकरे अर्थात् इन की रसक [पावा] होकर उनकी ही मसक (पातक)
 बन जावे इस ही प्रकार ली अपने पत्नी की, सेनापति राजाको, विजय गुरुकी, विभास पात
 करे तो महामोहनीय कर्म बये ॥ १८ ॥ १६ जो कोष देवाधिपति राजाकी, जो बाणिक्रदि के मालक
 नगर भेष्टादि की लो बहु यका कीर्तिके चारक के पात की इच्छाकरे वह महामोहनीय कर्म बये ॥ १९ ॥
 १७ जो बहुत लोकों का स्वामी हो जिस प्रकार समुद्र में इषि आधार मूल होता है उस प्रकार बहुत
 लीनों को आधारमूल हो, इस प्रकार के लीन की पात किन्तवे वह महामोहनीय कर्म बये ॥ २० ॥ २८
 जो कोई दीक्षा ब्रह्म करने का संपत्ति सुखपायीर्षल सब्ब होने का अभिलाषी हुआ हो इस प्रकार
 निवृत्तिवैरागी को बर्म से धृष्टकर वैरागी का वैराग्य उतारे तो महामोहनीय कर्म बये ॥ २१ ॥ १९

महामोहं पकुब्ध ॥ ३१ ॥ जयमाणुसस्यं भोग अदुवापरलोद्वेग ॥ तेतिप्पियतो
 आसयति महामोहं पकुब्ध ॥ ३२ ॥ इद्धिजुह्वं जसोचणो, देवाण वल्वीरिय ॥ तोसि
 अनन्ननगले, महामोहं पकुब्ध ॥ ३३ ॥ अप्पस्समाणो पस्सामि, देवाजक्खायगुह्मगा ॥
 अंन्नाणीजिणयूट्ठी, महामोहं पकुब्ध ॥ ३४ ॥ एतेमोहगुणवुत्ता, कम्मवाविच्च-
 मंवट्टुगा ॥ जैउभिव्खू विवज्जेज्जा, चरिच्चसंगवेसए ॥ ३५ ॥ जपि जाणेइओपुब्ध,

कोई धर्मिक संज्ञन सखातया मित्र के अर्थ तथा स्वरूपा के अथर्वशीकरण औचाटनादि मंत्र तंत्रादि मयुजे वह महा
 मोहनीय कम धरे ॥ ३१ ॥ २८ जो कोई, इस भव मनुष्य संपत्ती भोगों में व परलोक के देवादि संपत्ती
 भोगों में अतृप्ति घरता अभिलाषी होवे वह महा मोहनीय कर्म धरे ॥ ३२ ॥ २९ जो देवता महा ऋद्धि
 भक्त यत्नवत वल्वत होवे उन के अवर्णवाद बोले निन्दा करे वह महा मोहनीय कम धरे ॥ ३३ ॥
 ३० जो कोई के पास देवता न आता हो देवता को नहीं देखा हो और अपनी मान पूजा के अर्थ
 लोको में करे कि देवता उपोत्तिषी विमान तथा व्यन्तर यक्षादि गुह्यक भवनपति इन चारों जात के देवों से
 समुक्त जाति का देवता घरे पास आता है, तो वह महा मोहनीय कर्म धरे ॥ ३४ ॥ यह उक्त ३० योल
 महा मोहनीय कर्मोपानन करने के तीर्थकर भगवतने कहे, उन को अनय के हेतु जान साधु छोड़े और
 आपत्ति, आश्रमों के चिये चारिआदि गुन की गवेषना करे ॥ ३५ ॥ भिनोने दीक्षा धारन बिये पाहिले

॥ दशमी-दशा ॥

तण कालेण तेण समएण रायगिहि णामं णयरे होरथा वणओ, गुणसिए चेइए ॥
 सेणिएनाम रायाहोरथा, रायवणओ, एव जहा उववाईए जात्र चेलणाए सद्धि
 विहरति ॥ १ ॥ ततेण से सेणिएराया अणयाकयाइ ण्हाएक्यवलिकम्मे कयको-
 उय मगलपायिच्छिसे सिरसा कंठमालकडे आविद्धमणिसुवणणे, कप्पियहारद्धहार

उस राम उस समय में राजशुही नामक नगर था, उसका वणन जानना, गुनीसिला नामक चैत्य था
 राजशुही नगरी में श्रेणिकराजा राज करता था, राजा का वर्णन जैसे उववाई शूत्र में कहा हैसा यावत्
 चेलुणारानी के साथ मूल भोगवता विचरता था ॥१॥ तब श्रेणिकराजा अन्यथा किसी वक्त ज्ञान किया
 कुछ किये कंतुक मगनार्थ तिलक छापे किये मस्तक से पाँच तक शृगार सजा, गले में माला
 पहनी, यथाविधि सुवर्णके मूषण मणिजडित पहने आठारे सरे पूर्णहार नयसरे आभेदार तीन सरेदार,
 नम्या लङ्कता कमर का कन्नेरा, जिससे अपने शरीर की घोमा की, गले में गोप अंगुलीयों में मुद्रिका
 धागन की याचन कल्पवृक्ष के समान अलंकारों से अलङ्कृत मूषणों से मूर्धित नृपति घना हुवा कोरटे
 घृत की मान्य बाल छत्र मस्तक पर धारन कराता यावत् जैसे शूर नक्षत्र तारोंओं के शृन्द में चन्द्रमा

क्रियाकिञ्चनहुअठ ॥ तवतावाणित्वेचा, ओहि आयावसिया ॥ ३९ ॥ आयरगुचे
मुद्रप्पा, भग्नेट्टिचा अणुचरे ॥ तओवमे सण्णेसो, विसमप्पी विसोअहा ॥ ३७ ॥
सुबंतपोससुद्रप्पा, भग्नेट्टिविचारे ॥ इहेव लब्धतिकिप्पि, पेचाय सुगत्तिवरं
॥ ३८ ॥ एवं अम्मिसमामम्म, सूरण्डु परकम्मा ॥ सव्वमोह विप्पमुक्का, जाई
मरणाभितीच्छ्या चिंथेमि ॥ ३९ ॥ इति यत्तमोहणियं नवमं दत्ता सम्मत्ता ॥ ९ ॥

क्याद किंचे हो बहुत कर्म कैंसे जेन कर्म का जानकर पाप का क्षय करने बुद्धाचार छुट तप कर्म
सेवन करे ॥ ३६ ॥ जाणार गुणीबेव बुद्धाला तावि आदि वर विधि प्रबल यर्म का पालन करे
जिस प्रकार सर्व कापणी का त्याग करवा है ॥ ३७ ॥ और जिस से वे सब सीधित पाप का त्याग करे
जो बुद्धाला त्याग न किये मोग की दुर्गति बाण्डन नहीं करवा है यर्म में अपनी आत्मा को स्थिर
स्थापवा है वर इस लोक में भी कीर्ति को हास करवा है और परलोक में देवादि सुभावे को प्राप्त करवा
है ॥ ३८ ॥ करो सूरवीर हर पराक्रमीयों ! इस प्रकार निर्मोह का लक्ष्येष्ट जानकर जो सर्वथा प्रकार
मोर से विमुक्त होते हैं वे जन्म मरण के बंधन को छेद परम सुखी होते हैं ऐसा भगवंतने कहा ऐसा
में करवा है यदि क्या मोहनीय स्थान मान भज्यपन्न नववी दशा लंपूर्ण ॥ ९ ॥

प्राणिय देवकुलाणिय मसाउय, पणियगिहाणिय पणियसालाउय,
जाणसालाउय, छुहाकम्मताणिय, वाणियकम्मताणिय ऋट्टकम्मताणिय इगालकम्म-
ताणिय, वणकम्मताणिय दनकम्मताणिय, जे तत्यवमहचरगा अणयाचिट्ठति
तेण एनं नदह एन खटु देवाणुणिया ! सेणियराया भमसारपुत्ते आणवति-जयाणं
समणं भगवं महावीरे आविक्खे तित्थक्रे जाय संपाविओकामे, पुब्बाणुपुण्ड्रि चरेमाणे
गामाणुगाम दुइज्जमाणे, सुहसुहेण विहरमाणे, जाव सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणे

१२ गुनादि गन्ता हो ऐसी शास्त्राओं में, १३ व्यापारीयों के मन्त्रन में १४ सूतारों [ब्राह्मणों] के
मन्त्रनों में १५ कोयले निष्पन्न हो उस स्थानों में, १६ वृत्तों का छेदन होता हो क्या वस्त्र युनाते हो
पेसे स्थानों में, और १३ कर्मदि के गद्यादि वन्ते हो ऐसे स्थानों में, इत्यादि स्थानों जाकर जो जहाँ
मात्सर स्थानक के मालक हों अथवा जिस का वह स्थान हो उस की आज्ञा से वहाँ उस का रत्नपाल
रहना हो, उन से ऐसा करो—श्रेणिक राजा (अपरनाम भमसार राजा) आज्ञा करता है, इकम देता है
कि जिस इक्त श्रमण मगगल श्री महावीर स्वामी धम की आदि के करता, चारों तीर्थ के स्वायक यावत्
मोक्ष के अभिलाषी, पूर्वानुपूर्व चमत्ते भूये, प्राणानुप्राण रहने भूये, मुन भुल से कियरते भूये, यावत् संयम

तिसरय पालवपल्लवमाणे कडिसुचय सुकयसोभे पिण्डि गेवज्ज अणुलेजग जाव
 कपयस्सएधेव अलकिए विभसिए णारिदे, सकोरटमल्लदामेण छसेण धारिज्जमाणे
 जाव ससीत्रयियवसणे नरवई जेणेव बाहिरिया उवट्टणसाला जेणेव सिंहासणे
 तेणेव उवागच्छइ २ चा सीहासणवरसि पुरत्थाभिमुहे निसीयति २ चा, कोडुचिय
 पुरिसिस्तद्वेइ २ चा एवं चयासी गच्छहणं तुमं देवाणुप्पिया ! जाइ इमाइ रायगि-
 हत्स नगरस्स बाहिया तंजहा आरामाणिवा, उवाणाणिवा, आपुसणाणिव, आयत

नोमता है इस प्रकार भीषिका उत्पन्न करने वाला नृपति वहां बाहिर की उपस्थान बाल-राज्यसभा
 की जहां राज्य सिंहासन था वहां आया, आकर सिंहासन पर पूर्वोन्मिमुत पैठा ॥ बैठकर कोटुम्बिक
 पुरुष को बोलाया बोलाकर यों करने लगा-अहो देवानुप्रिय तुम जो इस राजपुत्री नगरी के बाहिर १ स्त्री
 पुरुष के पीछा करने के पुष्पात्रि के आराधों में २ अनेक प्रकार के वृक्षों पर पुष्प फलादि की
 आभावर भीषित उपानों में, ३ कुंभकारादि की बाला में, ४ यसात्रि देवों के आपतन भीषितों में
 ५ नागादि देवों के देवालयों में ६ समा के स्वानों में, ७ पानी की प्रया के स्थानों में, ८ किरियानों की
 बन्दारों में, ९ किरियानोंकी दुकानों में, १० रयादि वाहन की बाछाओं में, ११ छुर कर्म (नापिक) की बाला में

णाणिय ँवकुलाणिय मभाउय पवाउय, पणियगिहाणिय पणियसालाउय,
 जाणसालाउय, लुहाकम्मताणिय वाणियकम्मताणिय ऋट्ठकम्मताणिय इगालकम्म-
 ताणिय, वणकम्मताणिय, दत्तकम्मताणिय, जे तत्थवमहचरगा अण्णयाचिट्ठति
 तेण एव उदह एव खलु देवाणुप्पिया ! सेणियराया ममसारपुचे आणवति-जयाणं
 समणे भगव महावीरे आदिकरे तित्थकरे जाव संपाविओकामे, पुव्वाणुपुनिं चरेमाणे
 गामाणुगाम दुइजमाणे, सुहसुहेण विहरमाणे, जाव संजमेण तवसा अण्णणं मात्रेमाणे

१२ नृनादि यन्ता हो ऐसी शाखाअ. य, १३ व्यापारीयों के मन्त्रन में १४ मूतारों [बढाश्यों] के मन्त्रनों में १५ कोयले निष्पन्न हो उस स्थानों में, १६ वृक्षों का छेदन होता हो तथा वस्त्र पुनर्वासे से ऐश्वर्य स्थानों में, और १७ धर्मदि के वस्त्रादि बनते हो ऐसे स्थानों में, इत्यादि स्थानों जाकर जो जहाँ महत्तर स्थानक के मालक हों अथवा जिस का वह स्थान हो उस की आज्ञा से वहाँ उस का रक्षणाल रहता हो, उन से ऐसा कहा—श्रेणिक राजा (अपरनाम बमसार राजा) आज्ञा करता है, हुक्म देता है कि जिस इक्त श्रमण भगवान् श्री महावीर स्थायी धर्म की आदि के करता, चारों तीर्थ के स्वापक यावत् मोक्ष के अभिलाषी, पूर्वापूर्व चमते हुये, प्राप्मानुग्राम रहते हुये, मूल पुत्र से विचरते हुये, यावल संयम

इह मागच्छेज्वा इह समोत्तरंज्वा, तथापि तुम्हे समणस्स भगवआ महावीरस्स अहा पढिस्सु उग्गह अणुजाणह अहापढिस्सु उग्गह अणुजाणेज्वा सणियस्सरन्ना ममसारे प्येमट्ठपिय णिवेवह ॥ २ ॥ तएण से कोढुवियपुरिसे सेणिएन्नो मममारेणं एवं वुत्तासमाणा हट्टजावहियया करयल जाव एवं सामि तहविणएणं पडिसुणेइ पदे सामितहवि आणाविणएण पडिसुणिच्चा सेणियस्सरणो अतियाओ पाढनिस्समंति २ चा रायगिह णयर मज्झमज्जेण निगच्छति २ चा जाइ इमाइ रायगिहस्स नगरस्स

तप कर अपनी आत्मा भावते हुये यहाँ पधारे तब यहाँ सम्बसरे तब तुम श्रमण भगवंत श्री महावीर
स्वाभी को यथाप्रतिक्रम अवग्रह स्थानकादि भो उन के बाहिये उस को ग्रहण करने की आज्ञा त्ना
माझा देकर फिर मंगसार श्रेणिक राजा को भगवान के भागम का निवेदना करना (बघाइ देना) ॥३॥
तब बह कौटुम्बिक पुरुष ममसार श्रेणिक राजा क पास उक्त आज्ञा श्रवण कर वृष्ट तुष्ट हुवा शय जोड
दशों नल एक श्रित कर भस्तक पर बडाकर भावतनकर यों घोला--अहो स्वा भेद तयागति' इस प्रकार मनेनय
आज्ञा का स्वाकाग किया, आज्ञा स्वीकार कर श्रेणिक रामा के पास से निकला निकल कर राजप्रसी
नमरी के मध्य मध्य में होकर भो उस राजप्रसी नगरी के बाहिर आराम यावत् ना यहाँ उस के पात्रिक
ये मिन की मासकी में भो स्थान ये उन को यों कडा-श्रेणिक राजा की आज्ञा है कि श्री महावीर स्वामी

बहिया आगमाणिय जान जेतत्थ महत्तरयाअणया चिट्ठितितेणं एवं वयति जाव सेणि-
यस्म रण्णो प्यमट्ठं पिय निवेदेज्जा महपिय भवतु, दोषपि एव वदति २ सा जामेवदिसिं
पाउरुमया तामेवदिसिंपडिगया ॥ ३ ॥ तेण कालेण तेणं समएणंसमणे भगवं महावीरे
पाउरुमया आदिकरे तित्थकरे जान गामाणुगाम दूइज्जमाणे जाव अप्पाण भायेमाणे
विहरन्ति ॥ ४ ॥ तएण रायगिहे णयेरे सिंघाढग तिय चउक्क च्चच्चर
जान परित्तानिगया जाव पउज्जासेति ॥ ५ ॥ तएणं ते महत्तरगा

पथारे जो इन को स्थाननादि कल्पने योग्य वस्तु हो उसकी आज्ञा देना और फिर भगवत्पथारुने की वंशा
मुझे देना, यह इन को प्रियकारी होगा यों दो तीन वक्त कहकर वह कोयम्बिक पुरुष जिस जिज्ञा से आया था
उस जिज्ञा पीछा गया ॥ ३ ॥ उस काष्ठ उस समय में श्रमण भगवत् श्री महावीर स्वामी धर्म की आदि-
के कथा वतुर्विध तीर्थ के स्थापक थावत् ग्रामानुग्राम रहते हुये थावत् राजगृही नगरी के गुणसिल पगिचे में
पथारे तप संयम कर अपनी आत्मा को भावते हुये विचरने लगे ॥ ४ ॥ तब राजगृही नगरी के भृंगारु
पथ में त्रिक पथ में चौरास्त्रे में धनुस्त्र रास्ते मिल वहां लोगों भगवत् महावीर स्वामी का आगम सुन हष्ट
तष्ट हुये पावन परिपक्वा दक्षनार्थ आई, सोया गज्जि करने लगी ॥ ५ ॥ तब उस नगीचे के महत्तरक पुरुषों को उक्त

ऐणव समणे भगवं महावीर तेणव उवागच्छइ २ चा समण भगव महावीर
 तिसुत्तो वदति नमसति वदिचा नमसिचा नामगाय पुच्छति, नामगोयं पुच्छिचा,
 नामगोयं पधोने २ चा णगयओविमिलति एगयओमिलिचा एगतमेव
 कमिति २ चा एव वयासी-जस्सण देवाणुप्पिया ! सेणिएराया भमसारे
 दसण कंक्खसि, जस्सण देवाणुप्पिया ! सेणिएराया दसण पीहेइ,
 जस्सणे देवाणुप्पिया ! सेणिएराया दसण पट्येति, जस्सण देवाणुप्पिया ! सेणिएराया
 दसण अभित्तसेति जस्सण देवाणुप्पिया ! सेणिएराया भमसारे नामगोयस्स

समाचार मिलने से बड़ा श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वायीये तहां आया, आकर श्रमण भगवंत महावीर स्वामी को
 तीन वक्त बंदन नमस्कार किया, बंदना नमस्कार कर भगवंत का नाम गोत्र पुञ्जा नाम गोत्र पूछकर
 अवधारा सब पहचरण एकत्र मिले, मिलकर एकान्त में गये एकान्त में आकर यों बोले-अहो देवानुमिया!
 श्रणिकराजा भिनके दर्शन को चहाता है, जिन के दर्शन की अनुमोक्षा करता है, जिन के दर्शन की
 प्रायना करता है, जिन के दर्शन का सदैव अभिस्वापी रहता है, जिन का नाम मौत्र मात्र ही श्रवण
 करने से हुए हुए होता है, वही यह श्रमण भगवत श्री महावीर पर्य की आदि के करवा सायु प्रभुत्व

रिसत्रणयाए हट्टुट्टे जाव भवति, सेण समणे भगव महावीरे आइगरे तित्यगरे जाव
मव्वण सव्वदसी, पुव्वाणुपुत्थि चरमाणे गामाणुगाम दूइजमाणे, सुहसुहेण जाव
विहरमाण, इहभागए इहसंपत्ते जाव अप्पाण भावेमाणे विहरति, त गच्छहे
देवाणुपिया ! सेणियरस रत्तो एयमट्ट निवेदेमो, पियमे भवतु तिक्कट्टु एयमट्ट
अप्पामणरस वयण पडिसुणति, अणमणस्स पडिसुणेत्ता, जेणेव रायगिहे णयरे
तणेव उवागच्छइ २ ता रायगिह णयर मज्झमज्जेण जेणेव सेणियस्स रण्णे गिहे
जेणेव सेणिएराया तेणेव उवागच्छइ २ सा सेणिय राय करयलपरिगहिय जाव

चाग तीर्थ के स्थापक यावत् रावय सर्वदर्शी पूर्वाणुपू वल्ले ग्रामानुग्राम राते सुखसुख से विचरते यहाँ
भाए यहाँ सप्तात हुी यावत् अपनी आत्मा को भावते हुवे विचरते हैं इस लिये अहो देवानुप्रिय !
जल्ने श्रेणिक राजा को यह कथन निवेदन करे, पयाइ दे, यह उन को भियकर होगा इस प्रकार विचार
क्रिया परस्पर मान्य किया मान्यकर जहाँ राजग्रीही नगरी थी तहाँ आये आकर राजग्रीही नगरी के मध्य
मध्य में होकर जहाँ श्रेणिक राजा का भुवन मिस में जहाँ श्रेणिक राजा थे उन के पास आये, आकर
हाथ जान् नरोमली मन्त्रक पर स्थापन कर श्रेणिक राजा को जयहो विजयहो यों कह यथाये, यथाकर

जपुण विजपण वधानेति २३३ एव वयासी जस्सण सामी ! इस्सणकस्सति जात्र सण
समण भगव महाश्वीरे गुणसिलए चैइए जात्र विहरति तस्सण देवानुप्पियाण पियं
निवेदमो पियमे मवतु ॥ ६ ॥ तएण से सेणिएराया तेसि पुरिसाण अतिए
एयमट्टु सोधा निसम्म वट्टुट्टु जावहियए, सीहासणामो अब्भुट्टेइ २३३ जहा कोणिओ
जाव वदसि नमसाति, वदिसा नमसिसा ते पुरिसे सक्कारेइ सम्माणेइ सक्कारेसा सम्माणिसा
विठल जीवियारिह पतिवाण इत्यति २३३ पडिविसजेइ २३३, नगरगुप्पए

यों कहने लगीं अहो देवानुप्रिय ! जिन के दर्शन को आप चारते हो यावत बेसी श्रमण भगवत श्री महावीर
स्वामी गुणसिल बैत्य में यावत् तप संयम से आत्मा भावते हुवे विचार रहे हैं यह देवानुप्रिया को
प्रियकारी मिलिबदाइ देता हूं सो आप को प्रिय करता होवो ॥ ६ ॥ तब श्रेणिक रामा उन पुरुषों
के पास बक कथन श्रवण करके अवधार करके हर्ष संतोष पाया सिंहासन छोड लडा हुआ, लडा
होकर जिस प्रकार तपवाइ सूत्र में कोणिक रामा का जिनमंथन का वर्णन चला है वस ही प्रकार
श्रेणिक रामाने भी वहां समा में से बदना नमस्कार किया, उस पुरुष का सत्कार सन्मान किया
पिस्तीर्ण-बहुत कास पर्यंत भोगवें इतनी आजीविका रूप-धन प्रीतिदान दिया, देकर बीसर्जन
किया, विसर्जन करके नगरगुप्तिव-कान्द्यालको बोलाया, बोलाकर यों कहने लगे अहो देवानुप्रिया ! रामगृही

सद्वावेइ २ चा एवं वयासी-खिण्यामेव भो देवानुषिया ! रायगिह नयर सर्भितर
वाहिरिय आसिय समउसिय उवलिच जाव करिचा पञ्चुषिणति ॥ ७ ॥ तएण
से सेणि० राया सेणावेइहि सद्वावेइ २ चा एवं वयासी-खिण्यामेव भो देवानुषिया !
हय गय रह पायकाणचतुरगिणि सण सज्जावेइ २ चा एयमाणतिय पिष्ठाविणह ॥ ८ ॥
तएण से सेणि० राया जाणसातिय सद्वावेइ २ चा एव वयासी-खिण्यामेव भो
देवानुषिया ! धरिमयं जाणप्यवर जुत्तमेव उवट्टवेहि उवट्टुविच्चा
मम एयमाणसिय पच्चापिणह ॥ ९ ॥ तएण से जाणसालिइ सेणि० रण्णा

नगरी को बाहिर स भीतर से पानी का छिटकाव करो घाहकर कचरा कटकादि दूर डालो, भवनादि
को लीपा पोता स्वच्छ करो रास्ते में मगनों बपा इत्यादि सजाइ समा यह मेरी आज्ञा पीछे मेरे सुमत
करो ॥ ७ ॥ तब श्रेणिक रामा ने सेनापति को बोलाया, बोलाकर यों बोले अहो देवानुषिय ! शीघ्रता
से हाथी घोड़े रथ पायदल चतुरंगी सेना सज करो यावत् यह मेरी आज्ञा पीछी मेरे सुमत करो ॥ ८ ॥
तब श्रेणिक रामा ने यान (रथ) ज्ञाना के मालक को बोलाया बोलाकर यों कहने लगे अहो
देवानुषिया ! शीघ्रता से धर्मरथ प्रधान सज करो जगत कर यहां लावो स्थापन करो, मेरी यह आज्ञा
पीछी मेरे सुमत करो ॥ ९ ॥ तब बह रथ गाला का मालिक श्रेणिका रामा का वक्त बचन

एव वृत्तासमाणा हृदयुता जाव हियया जेणव जाणसाला तेणेव उवागच्छइ २ चा जाणसाल
अणुपविस्इ २ चा जाणग पधोरुमइ २ चा जाणग सपमजइ २ चा जाणगणी-
णेइ २ चा जाणाइ सवदेति २ चा धूसपीहणिइ २ चा, जाणाइं समिल करेइ २
चा जाणाइ वरमड मंडियाइ करेइ २ चा, जेणेव बाहणसाला, तेणेव उवागच्छति २
चा बाहणसाल अणुपवेसति २ चा, बाहणाइ पञ्चुविवस्ति २ चा
बाहणाइ पमजइ २ चा बाहणाइ अफालेइ २ चा बाहण्याइ णिणेति २ चा बाहणाइ
धूसपविसेति २ चा, बाहणाइं समिल करेइ २ चा बाहणाइ वरमडमडियाइं करेइ २ चा

मुन कर हृदय में आनंद पाया जहाँ रयद्राष्ट्र थी वहाँ आया छे जाने के योग्य घॉमक
रय की देखे, देख कर योग्य रयों को उपर नीचे किये रयों को वस्त्रादि से
झाँदे, झाँकर रयद्राला से बाहिर निकाले, निकलकर एक स्थान स्थापन किये, फिर उन रयों को वस्त्र
[स्त्री] पहिनाया, रयों को चारों तरफ से धरावर बके, उन रयों में गादी तकीये आदि मंडोपकरण
स्थापन किये, रयों को सर्व प्रकार के मूषणों (धुपरे आदि से) विमृषित किये रयद्राला में जिस स्थान
श्रेष्ठ वंधे थे वहाँ आये धानशाल में प्रवेश किया रयोंको नोतने लायक वस्त्रों को देखे, उन वस्त्रों को हाथ
फेरा कर होन्पार किये, श्रुतक पूछ साफ किये, वने स्त्रोत्तर धाहिर निकाले, उमकी श्रुतादि वस्त्र पहनाये

जाणगं जोषति २ चा, गदुमंगाहेति २ चा पडगलट्टि, पआएय सम्म आरुहइ
 २ चा, अतरासमयदसि जेणेव सेणिपराया, तेणेउ उवागच्छति २ चा ततो करयल
 जान एउ वयासी-जुचेते साभी ! धम्मिएजाणअप्पवरे इट्ठा भदत वग्गुगाहिं ॥ १० ॥
 तएण से सेणिपराया भभमागे जावसालियस्स अतिए एवमट्ठं सोचा निसम्म हट्ठ तुट्ठ
 जाव मज्जणघर अणुपविसति २ चा नाय कप्परुक्खए चेव अलंकिय विमूसिय
 णरिदे जाव मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ २ चा जेणेव चिह्णणादेवी तेणेउ उवाग

सय वेलोंको एकद किये, वेलोंको पुधरमाल आदि भूषणों से भूषित किये, वनको रयों से जोधे जोतकर
 उनकी रस्सी ग्रहण की, प्राणा (लकड़ी) ग्रहण की, उस रथपर अपने बैठने के स्थान, बरानर बैठे,
 पैठकर जहाँ श्रेणिक राजा था वहाँ आये आकर दोनों हाथ जोड़कर गों बोले अहो स्वागिन् ! आपकी
 आज्ञा भ्रमाने रथ जोतकर समझ किये हैं यहाँ लाकर स्थापन किये हैं ॥ १० ॥ तब श्रेणिह राजा
 भ्रमसार रथद्रोणा के मालिक से उक्त वचन श्रवण कर हृष्ट तुष्ट हुआ गाथा मजन स्नान करने के घर
 में प्रवेग किया यावत् कल्प वृक्ष के समान अर्न्धकृत विभूषित नृपति वनकर यावत् मंजन घर से निकला,
 निकलकर जहाँ चिह्णना रानी थी वहाँ आया, आकर चिह्णना रानी से इसप्रकार बोला-अहो देवानुमिये ! श्रमण

छेइ २ सा चिह्ण देवि एवं वयासी—एव खलु देवाणुप्पिए! समणे भगव महावीर
आदिकर तित्थकरे जाव पुव्वाणुप्पिन्व प्परमाणे जाव सज्जेण तवसा अप्पण
माधेमाणे वि० रति त महाफल देवाणुप्पिए! तद्दाम्भवाणं अरिहताण जाव त गम्भामो
देवाणुप्पिए ! समण भगवं महावीर वदामो णमसामो सक्करोमो सम्माणेमो, कल्लोण
मंगलं देवय चेइयं पज्जुवासामो, एतेण इह भवेय परममेव हिंयाए सुहाए स्वमाए निस्सेसाए
जाव अणुगामियचाए भविस्सति ॥ ११ ॥ तएणं सा चिह्णदेवी, सेणियस्स

मगदंत श्री महावीर स्वामी पर्यकी आदि करता, चार तीर्थों के स्थापक याचत पूर्वानुपूर्व चलते यावत् समय तप से
आत्मा को मानते हुए यहां के गुणसिद्धा नामक बगिचे में विचार रहे हैं अहो देवानुमिए ! तयारूप
अरहत मगदंत के नाम गोत्र का श्रवण करने में ही महाफल होता है तो व्याख्यान सुन प्रभोत्तर करने
के फल का तो कहना ही क्या ? इसलिये अहो देवानुमिये ! चबो श्रवण भगवत श्री महावीर
स्वामी को वदना नमस्कार करे, सत्कार सम्मान देने, वे कल्याणकारी हैं, मंगलिक हैं देवाधी देव हैं मान
पत्न हैं, जिन की पर्युपासना-सेवा भक्ति करे यह सेवा भक्ति इस भव में परमभ में श्रित की कर्ता सुख
की फर्मा, समा की फर्मा, निस्तार की कला यावत् मरिच्यत में परम्परा से कल्याण कर्ता होगा ॥ ११ ॥

प्राअतिष्ठ एयमद्रु सोद्या निसम् हट्ट तुष्टे जात्र पडिसुणेतिर चा जेणेव मज्जण घरे
तेजेव उत्रागच्छतिर चा, पद्या कयचलिकम्मा कयकोउयमगल पायच्छित्ता, किं ते वर
पायपत पेउर मणि मेहल हाररयवत्थे उवविय कुडग खुडुय एगावलि कट्टमुरज
तिसरयवरवलय, हेमसुत्तय कुडल उज्जोय त्रियाणाणोरयणभूसियगी, वीणसुय
वरयपवर परिहिया दुगुल्ल पुफुमाल कत रमाणज्जओ उत्तरिज्जा, सन्जोय सुरमि कुसुम
तत्र वर चिह्नादेवी श्रेष्ठिक राजा के पास वक्त कयन श्रवन कर अवधारकर हर्ष सतोप पाई यावत्
वनन मान्य किया, मान्यकर जहां मंजन (ज्ञान करने का) घर या तहां आई ज्ञान किया, कुछे
किये कौतुक र्गणसार्थ तित्तक छापे किये फिर प्रधान नेपुर पाँवों परने पाणेषय मेलसा-कन्देरा कमर में
पटना हृदय पर हार धारन किये, कुंडलों कान में धारन किये, मुद्रिका से अगुलीयों, महित की
एक सरा सुवर्ण दोरा, मुरन-मादभिये, तीनसरा हार, उचय बलिये (चूरीयों) सुवर्ण सूत्र, इत्यादि
सूत्रों से सज्जा हो कुंडलों से मुख को उद्योतित किया रत्न जडित मूषणों से विभूषित हैं अगोपांग
निस में तसे ही बिना मूत जाति के वस्त्रों धारण किये क्षेम युगल मुकुटाल वस्त्र का कंतकारी रमणिय
विषयकारी नाक के वायु से ठंढे ऐसे और शरीर नहीं देखा वे ऐसे मकड़ी के जाले जैसे वस्त्र धारन
किये वनस्पति जातिके पत्र फूल फल के निष्पन्न हार तुरे गजरे आदि अनेक प्रकारके फूलों के मूषण धारन किये हैं

जाव पज्जुवायेति ॥ एत चिह्णणात्रि जाव महत्तरग परिक्खित्ता जेणेव समेण भगव
महावीरे तेणेन उवागच्छइ २ एता समण भगव महावीर वंदित्ता नमसित्ता सेणिय-
रायं पुरओ कामो द्वियादेव जाव पज्जुवासति ॥ १३ ॥ तएण समणे भगव महावीरे
सेणियरम रण्णे भमसारस्स चिह्णणाए देवीए तीसे महइ महालियाए परिसाए इसि
परिसाए, जइ परिसाए, मणुयपरिसाए देवपरिसाए, अणेगसयाए जाव धम्मोक्खिओ ॥
परिसा पडिगया, सेणियोराया पडिगया ॥ १४ ॥ तत्थेगइयाण निग्गयाणय निग्ग-

साथ धार्मिक राय पर आलुइये, आलुइ होकर, कोर्ट वृत्त के फूलों की माला का छत्र सिर पर धारन
करते हुये याता इवयाइ सूत्रमें कहे अनुसार मगधत के पास आकर सेवाशक्ति करने लगे ॥ १३ ॥
इस प्रकार चिह्ना देवी यात्र प्रहसनों से परितरी हुई जहाँ श्रमण भगवत श्री महावीर स्वामी थे तहाँ
आई तहाँ आकर श्रमण भगवत श्री महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार किया, वंदना नमस्कार कर
श्रेष्ठिक राजा को आगे रखती हुई आप पीछे पर्याद से खड़ी हुए भगवत की सेवा शक्ति करने लगी ॥ १३ ॥
तब श्रमण भगवत श्रीमहावीर स्वामी श्रेष्ठिक राजा भयसार, और चिह्ननारानी इत्यादि जो वह महापरिपद
परूप हुई थी क्षत्रियों की परिपद, योत्थों की परिपद यन्त्रियों की परिपद देवताओं की परिपद, अनेक
सहभोग्य जिन को यावत धर्म लगा कही ॥ परिपदा पीछी गई श्रेष्ठिक राजा चिह्ननारानी भी पीछी

भुजमाणे विहरामो, सेत्त साहु ॥ १५ ॥ अहोण चिह्णणा देवी ! महिद्धिया जाव
महासुक्खा जाणण्डाया कयवल्लिकम्मा जान सब्बालकारविभूसिया सेणिएणरञ्जा
सद्धि उरालाइ जाव माणुस्सगाइ भोगभोगाइ भुजमाणी विहराते, ण मे दिट्ठातु
देवीओ देवत्तोगसि सक्खं खलु अय देवी ! जइ इमस्स सुचारियस्स तव नियम बभवे
रवासी अट्टारसहरस सीलागघरा कट्ठाण फलविचित्रिसेत्ते अरियवयमग्नि, आग-
मिस्साणं इमाइ एतारूवाइ उरालाइ माणुस्सगाइ भोगभोगाइ भुजमाणी विहरामो,

मनुष्य संबंधी काम भोग भोगवते विचरे इस प्रकार साधुओंने नियाना किया ॥१५॥ अहो इति !
भारमयं चिह्णना देवी महाश्रद्धि की धारक यावत् महा मुख की मोक्षा जो ज्ञान करके दुष्टे करके
यावत् सर्व प्रकार के अस्कारों से अलंकृत होकर श्रेणिक राजा के साथ चदार प्रयान यावत् मनोह
यावत् मनुष्य संबंधी ये काम भोगोपभोग भोगवती हुई विचरती है, हमने देवलोके की देवियों नहीं देखी
परतु मत्तयस में यह देवी है, जो हमारे अनशनादि तप कर अभिप्रादि नियमों का ब्रह्मचर्य की गुप्ती का
भठारह हजार प्रकार सीलांग रख को धारन करने का कल्पानकारी फल वृत्ति विशेष हो तो हम मविष्य
काम में जिस प्रकार चिह्णना रानी मुखोपभोग भोगवती है वैसी हम भी भोगवती विचरे ऐसा साधुओंने

सेच साहुणी ॥ १६ ॥ अजो चि सभने सगव महर्षीरै तेणं बहवे निगंथाय निगयीओय
 दामंतेचा एव वयामी—सेणिय रायं चिहणं देवि पासिस्ता इमेएतारूवे अज्झस्थिए
 जाव समुप्पजित्था अहोणं सेणिएराया महिष्टिए जाव वयमवि भूजामो सेच साहु ॥
 अहोण चिहणदेवी महिष्टिया सुंदरा जाव सेच साहुणी ॥ सेणणं अजो ! अहु
 समट्ठे ? इता अलिय ॥ १७ ॥ एव खलु समणाउसो ! मए धम्मो पणसे-इणमेव
 निगथे पावयणे सबे अणुचरे पटिपुण्णे केवलिए समुद्धे नेयाउए सहकत्तेण सिद्धि-

नियाना किया ॥ १६ ॥ अहो आयों ! इति श्रमण भगवन् श्री महावीर स्वामी वन साधु साध्वीयों को बोलाकर यों कहने लगे—अहो निर्धन निर्धियों ! श्रेष्ठिक राजा चिह्ना रानी को देखकर इस प्रकार अध्यवसाय यावत् उत्पन्न हुवे अहो इति आश्चर्य श्रेष्ठिक राजा महाशक्ति का धारक महा सुख का भोक्ता यावत् साधुभोजने नियाना किया और अहो आश्चर्य चिह्ना देवी महाशक्ति धारक यावत् महा सुख की भोक्ता अत्यन्त सुदर यावत् साध्वीयोंने नियाना किया अहो आयों ! निश्चय से यह अर्थ सचा है ? वे सब बोले हाँ भगवान् ! सत्य है ॥ १७ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तों मैंने इस प्रकार के धर्म की प्रशंसा कि है कि जो निग्रन्थ के प्रवचन-तीर्थकर मापित दादृक्षांग रूप जो जो धर्म है वह सर्व धर्मों में अनुचर प्रबान धर्म है, प्रक्तिपूर्ण है निःकेशस रागद्वेष रहित है, अत्यन्त शुद्ध पवित्र निर्मल है,

मगो मुक्तिमगो गिज्ञाणमगो अत्रितहमत्रिसिद्धि सव्वदुक्खप्पहीण-
मगो इच्छविया जीवा सिद्ध्यति बुद्धंति मुचति परिनिव्यायति सव्वदुक्खणमत
करति ॥ १८ ॥ जरसण धम्मस्स निगथे सिक्खाए उट्ठिए विहरमाणे पुरादिगिछाए
पुरा पिवासाए पुरावायातवेहिं पुरापुटे विरुक्खरूवेहिं परिसहोवसग्गेहिं उदिण्ण कामजाए

न्यायरूप है, मायादि तीनो शून्य का नाशक है, सर्व कार्यार्थ सिद्ध करने का रास्ता है, कर्म बन्धन से
मुक्त करने का रास्ता है, ससार से पार होने का रास्ता है जहाँ से पीछा आना नहीं ऐसा निर्वाण
स्थान प्राप्त करने का रास्ता है अविनाश्य निसिद्ध रास्ता है अन्मादि या शरीरादि सर्व दुखों का क्षय
करने का रास्ता है इस मार्ग में जो जीवों स्थिर हो कर रहे हैं वे जीवों सर्व अर्थ की सिद्धिकर सिद्ध
हुवे हैं केवल ज्ञान केवल दर्शन कर लोकालोक के सर्व भाव के जानने देखने वाले हुवे, कर्म फासी से
मुक्त हुवे हैं छूटे हैं, कणाय दावाला को मुहाकर शीतलीमूत हुवे हैं, शरीरिक मानसिक सर्व दुःखका क्षय
किया है ॥ १८ ॥ इस धर्म सम्बन्धी असेवना ज्ञान की और ग्रहणा आज्ञार की इन दोनों क्रिया में जो
निर्ग्रन्थ उपस्थित सावधान हुवे हैं इस ही शिक्षा प्रमाने जो बिचरते प्रवर्तते हैं इस शिक्षा में प्रवर्तते
हैं सुधा तृपा धातु-धीत, ताप इत्यादि विविध प्रकार के परिपक्व कर तथा देव
मनुष्य तिर्यग सम्बन्धी उपसर्गों स्पर्शित हुवे, तथा मोहोदय काम विकार का उदय हुवे

अचति जायइ गिजातिय सप्पभा, सपुब्बाचारचण, ण्हाये कयवलीकम्मे जाव
सब्बालंकार त्रिभूसिया, महति महालियाए कूढागार सालाए, महति महलियसि सिंहासणासि
जाव सब्बाराइणिणं जोतिणाड्डियापमाणाणं, इत्थिगुम्म परिवुडे महायाइय नट्ट गीय
वाइय तांति तल तालतुडिय घण मुयग महल पडप्पवाय रेणेण उरालाइ माणुस्सगाइ
भोगभोगाइ मुंजमाण विहरति तस्सण एगमवि आणवेमाणस्स जाव चत्तारि
पव अटुचा चेव अम्भुदेति भण देवाणुप्पिया ! किं करेमो किं आहारामो किं

उज्ज्वल भेत छत्र धारन किया है, अभ्युदयत-सन्मुख मण्ड ग्रहण किये हैं तालपत्र पंखे उत्कृष्टा से बर्जित
रहे हैं इसलिये हैं भेत चामरों उन का देखनेको बहुत से लोगों घर के बाहर आते हैं घर के अंदर आते हैं उस
की प्रभा झलकितोभित है ऐसे मान कर कुछे कर यावत् सब प्रलकारों कर अलंकृत महा विस्तारवत कुटागार
झाला के सामान घर में, महा जबर यावत् रत्न नदित सिंहासन पर रोमनी की ज्योति झगमगती हुई के
प्रकाश में, तीर्थों के वृन्द कर परिवरा हुआ महा जबर महा नाटक गीत वार्दित्र तंत्रिक ताल तालीयों
नृत्ति-नुरादि गन मृदग मादल पडर पवाइ इत्यादि के नाद युक्त प्रधान मनुष्य संवधी भोगोपभोग
भोगवता विचरता है वह एक मनुष्य को पोसाता है तब यावत् चार पांच स्त्री पुरुष खड़े होजाते हैं
और वे कहते हैं कि—भरो देवानुभिय ! हम क्या करें ! क्या भोजन निष्पन्न करें ! क्या लाकर दें ?

दारए भवति सुकुमाल पाणिपाए जात्र सुखे ॥ २३ ॥ तएण से दारए
उमुक्खात् भावे विण्णाय परिणाय मेसे जीवणगमणुपचे सयमेव पेइय दाय
पडिअज्जति तस्सेवअइजायमाणस्सवा णिजायमाणस्सवा पुरओ जाव
दासी दास जात्र किंते आसगस्स सदति ॥ २४ ॥ तस्सण तहप्पगारस्स
पुरिस जायस्स तहारूवे समणेवा माहणेवा उभओ कालं केवली पण्णस धम्म
चरकर इस मृगु लोक में चक्रकुल को पुत्र उचम माता के पल वाले इस प्रकार के किमी कुल में पुत्र
पने उत्पन्न होते वहाँ लड़का होते वह सुकुमाल दाय पाव के तले वाला यावत् स्वरूप हुवे ॥ २३ ॥ तब
वह वालक वाल्यावस्था से मुक्त हो विज्ञान अवस्था को प्रणमित हो यौवन अवस्था को प्राप्त हो स्वयं अपनी
मालकी घर में प्राप्त करे उसके देश से आते हुवे देशांतर को जात हुवे आगे पीछे दास दासी उक्त प्रकार सब
करना एक को बोलते चार पांच जने लठे होते और पूछे कि क्या करते हो, चाहे सो प्रकार का
जो नियाना करके पुरुषों में उत्पन्न होता है इसको कोई सयाग्रतिरूप अन्न-तपस्वी-साधु महाशय-भारो
ऐसे उपदेश के करता है दोनों वक्त [प्रथम पहर में और अन्तिम (चौथे) पहर में केवली यगवत का
का। द्वा र्थ का सकते हैं ? हाँ कह सकते वह उस धर्म को मुन सकता है मान्य कर सकता है ?

✽ अन्न दान का साधु और माहण शब्द का भावक भी अर्थ करते हैं

उत्तरेणो किं अविद्वामो किन्ते हिय इत्थिय किन्ते आसगस्स सवति ॥ २० ॥ ज
पाभिच्चा निगगधे निदाण करेइ जइ इमस्स तव नियम बंमचेर वासस्स तंचेव जाव
साहु ॥ २१ ॥ एवं खलु समणाउत्तो ! निगगधे निआण किच्चा तस्स ठाणस्स
अणालोइ अपढिक्खे कालमासे कालकिच्चा अन्नयरेमुदेवलोएसुदेवचाए उववचारो भवति,
महिंभियेसुवा जाव चिरटितीएसुवा सेण तत्थदेवे भवति महिंभिए जाव ठिइए ॥ २२ ॥
ताओ देवलोगाओ आउक्खएण भवक्खएण, अणतर चयं वइच्चा जेइमे उग्ग-
पुच्चा महामाउया तेसिण अण्णयरसि कुल्लसि पुत्तचाए पच्चायति, सेण तत्थ

पया कराना चारते हैं ? क्या तुमारी इच्छा है ! किस को चाहते हो ? किस पर कवि है ? ॥ २० ॥
इत्यादि पुण्य के वाठ बबलोकन कर जो कोई श्रमण निर्ग्रन्थ नियाना करे कि, जो हमारे इस तप नियम
संयम प्रसन्नचर्य का फल भविष्य में होने दो हमारे को भी उक्त प्रकार के सुख की प्राप्ति होवो ' ॥ २१ ॥
तब निश्चय भरो श्रमण आयुष्यन्तो ! कोइ साधु साध्वी उक्त प्रकार का नियाना करे, अन्तिम अवस्थान
का उस की आलोचना निन्दना प्रतिफलना नहीं करे वह काल समाप्त हुवे मृत्यु पाकर देवलोक में देवता
पने उत्पन्न होने ॥ देवता महाक्रुद्धि का धारक यावत् दीर्घ बहुत सागरोपम बहुत पम्पोपम की स्थिति
का पारक हो ॥ २२ ॥ फिर वह उस देवलोक से आयुष्य का म्यिति का मय का सयकर निरंतर नरों से

निगांधी सिक्खाए उवट्टिया त्रिहरमाणी पुरादिगंलाए जाव उदिण्णकामा जाव
 त्रिहरेजा, साय परवमेजा साय परकममाणी पासेजा ॥ २७ ॥ से जाइ इमाओ
 इत्थियाओ भवंति—एगा एगजाया, एगाभरणाविहिणा तेलपिलाइवा सुसंगोपिया
 बेलपिलाइया सुसपरिगहिया रयण करद्धग समाणी, तीसेण अइजाय माणिएवा,
 निजायमाणिएवा पुरओ मह दासीदास जाव किं ते आसगस्स सदति ॥ २८ ॥
 पर ग्रहण भसेनन द्विषा को भगीकार कर बिचरे उसे खुषादि परिषद देवादि उपसर्ग या मोहोदय से
 काम विकार उत्पन्न हो उसे वममान से सरे संयम मार्ग में सदैव पराक्रम (उद्यम) करे ॥ २७ ॥ वह
 पराक्रम करताई हुई देले कि यह स्त्री वह एक ही जगत् में उत्पन्न हुई उस सामान्य अन्व नहीं ऐसी
 कृपादि गुणपात् एक ही है, जाति के रत्नमय आभरण की धारण करनेवाली तेल की झीबी की माफक
 मानिजों से तथा पवित्र से रक्षित होकर रही हुई, अत्यन्त गोपकर छिपाकर बर्पात् सर्व दुःखों से
 बचाकर वृद्धि की हुई, उत्तम नरी आदि के वस्त्र की संदूक के सामान संरक्षण कराई हुई, बहुत श्रेष्ठ
 प्रकार प्रेम पूर्वक ग्रहण कराई हुई रत्नों के करड [तिजोरी] सामान भिषकरी, घर बथुरपर पितृ
 पर को आती हुई पितृ घर से बथुर घर को आती हुई उस के आगे पीछे दासी आदि का बन्ध
 दोरे यानत् वह एक को बोलावे और पार पांच नद आवे, क्या इन्हा है ? क्या वस्तु हुये स्वादिष्ट है ?

माइस्वेजा ? हंता माइस्वेजा, सेण पडिसुणेजा ? जो इण्टे समट्टे अमविण्णंसे तस्सधम्मस्स सवणयाए, सेयं भवति, महिच्छे, महारमे, महापरिगहे सुद्धम्मिए जाव दाहिणगामे नेरइए आगमेस्साण दुल्लभ बोहिया भवति ॥ २५ ॥ एव खलु समणाठसो ! तस्स निदाणस्स इमेयारुत्थे पावफल विवागे ज जो संचाएति केवल्लि पण्णचं धम्म पडिसुणिच्चए ॥ १॥२६ ॥ एव खलु समणाठसो ! मए धुम्मि पण्णचे ते जहा इममेव निरागरे पावयणे सचे जाव सन्व दुक्खाण अतकरोइ जस्सणं धम्मस्स

यह अर्थ योग्य नहीं अर्थात् एक प्रकार का नियाना करने वाला श्रमण पाएज के पास धर्म श्रवण नहीं कर सकता है क्योंकि नियाने के प्रभाव से वह प्राप्त रुचि में महा इच्छा वाला होता है महा आरंभ करने वाला होता है अर्थात् होता है यावत् दास्य विद्या की नरक में उत्पन्न होने वाला होता है मर उस को आगमिक काल में बोधवीम सम्पत्त्व की प्राप्ति होना दुर्लभ होता है ॥ २५ ॥ यो निक्षय अहो श्रमण आयुधन्तो ! इस नियाने का इस प्रकार पापरूप विपाक होता है वह केवली प्राणत धम को श्रवण करने समर्थ नहीं होता है यह प्रथम नियाना कहा ॥ १ ॥ २६ ॥ यो निक्षय अहो श्रमण आयुधन्तो ! मैंने धम कहा तथया—निग्रन्य के प्रवचन यावत् सर्व दारिद्रिक मानसिक दुःख के अन्त का करता उस धर्म में साध्वी उपस्थित हुई

निगधी सिक्त्वाऽ उवट्टिया त्रिहरमाणी पुरादिगच्छाए जात्र उदिण्णकामा जात्र
 त्रिहरेजा, सायं परक्कमेजा साय परक्कममाणी पासेजा ॥ २७ ॥ से जाइ इमाओ
 इरिययाओ भवति—एगा एगजाया, एगाभरणाधिहिणा तेलपिलाइवा सुसेगेपिया
 तेलपिलाइवा सुसपरिग्गहिया रयण करडग समाणी, तीसेण अइजाय माणिएवा,
 निजायमाणिएवा पुरओ मह दासीदास जात्र किं ते आसगस्स सवति ॥ २८ ॥

यह ग्रहण असेवन बिज्ञा को अनीकार कर बिचरे उसे सुषादि परिपह देवादि उपसर्ग या मोहोदय से
 काम विकार उत्पन्न हो उसे समयमान से सरे समय मार्ग में सदैव पराक्रम (बचप) करे ॥ २७ ॥ वह
 पराक्रम करती हुई देते कि यह स्त्री वह एक ही अगत् में वत्सल हुई उस सामान्य अन्य नहीं ऐसी
 रूप्यादि गुणशब्द एक ही है, जाति के रत्नमय भाभरण की धारण करनेवाली तेल की छीन्धी की माफक
 भावित्रों से तथा पतिघर से रक्षित होकर रही हुई, मत्स्यन्त गोपकर छिपाकर अर्थात् सर्व दुःस्वों से
 बचाकर वृद्धि की हुई, उष्णम जरी आदि के वस्त्र की संदूक के सामान संरक्षण कराई हुई, बहुत श्रेष्ठ
 प्रकार प्रेम पूर्वक श्राण कराई हुई रत्नों के फरह [तिजोरी] सामान प्रियकारी, यह शत्रुपर पितृ
 घर को आती हुई पितृ घर से शत्रु पर को आती हुई उस के भोगे पीछे दास दासी भादि का बन्ध
 होवे यात्रन् वह एक को बोधने और चार पांच इन आवे, क्या इच्छा है ? क्या वस्तु हुये स्वादिष्ट है ?

माइक्खेज्जा ? हुंता माइक्खेज्जा, सेण पडिसुणेज्जा ? जो इण्ठे समेट्ठे अमविण्णसे तस्सधम्मस्स सवणयाए, सेय भवति, महिच्छे, महारमे, महापरिगहे शुद्धस्सिम् जाव दाहिणगामे नेरइए आगमेस्साणं पुल्लम बोहिया भवति ॥ २५ ॥ एव खलु समणाउत्तो ! तस्स निदाणस्स इमेयाख्वे पावफल विवागे ज जो संचाएति केवल्लि पण्णचं धम्म पडिसुणिच्चए ॥ १॥२६ ॥ एव खलु समणाउत्तो ! मए धुम्मे पण्णचे त जहा इणमेव निगमेव पावयणे सचे जाव सब्ब दुक्खाण अतंकरेइ जस्सण धम्मस्स

यह अर्थ योग्य नहीं अर्थात् इच्छ प्रकृति का नियाना करने वाला श्रमण माइण के पास धर्म श्रवण नहीं कर सकता है क्योंकि नियाने के प्रभाव से यह प्राप्त रुचि में महा इच्छा वाला होता है महा आरंभ करने वाला होता है अथर्वी होता है यावत् दासण दिक्षा की नरक में उत्पन्न होने वाला होता है मर उस को आगमिक काल में बोधवीज सम्यक्सत्त्व की प्राप्ति होना दुर्लभ होता है ॥ २५ ॥ यो निश्चय अरो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियाने का इस प्रकार पापरूप नियाम होता है वह केवली प्राणित धम को श्रवण करने समय नहीं होता है यह प्रथम नियाना कहा ॥ १ ॥ २६ ॥ यो निश्चय अरो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने धम कहा तथा—निग्रन्थ के प्रवचन यावत् सर्व दारिद्रिक मानसिक दुःख के अन्त का करता उस धर्म में साध्वी उपस्थित हुई

निगधी सिक्खाए उवट्टिया विहरमाणी पुराविंगेलाए जाव उदिण्णकामा जाव
 विहरेजा, सायं परदमेजा साय परक्कममाणी पासेबा ॥ १७ ॥ से जाइ इमाओ
 इरिययाओ भवन्ति—एगा एगजाया, एगामरणाविहिणा तेलपिलाइवा सुसंगोपिया
 तेलपिलाइवा सुसपरिग्गहिया रयण करडग समाणी, तीसिणं अइजाय माणिएवा,
 निजायमाणिएवा पुरओ मह दासीदास जाघ किं ते आसगत्स सदति ॥ १८ ॥
 वर प्ररण असेवन शिक्षा को भगीकार कर बिचरे वसे सुधादे परिपठ देवादि उपसर्ग या मोशेवय से
 काम बिकार उत्पन्न हो वसे समभाव से सारे संयम मार्ग में सदैव पराक्रम (बल्यम) करे ॥ २७ ॥ वर
 पराक्रम करती हुई देखते कि यह स्त्री वर एक ही जगत् में उत्पन्न हुई उस सामान्य अन्य नहीं ऐसी
 कृपादि गुणवात् एक ही है, जाति के रत्नमय आमरण की धारण करनेवाली तेल की झीझी की माफक
 मांगिओं से तथा पतिघर से रहित होकर रही हुई, असन्ध गोपकर छिपाकर वर्षाव सर्व दुःस्वों से
 बचाकर बुद्धि की हुई, उसम जरी भादि के धन की संदूक के सामान सरसण कराई हुई, बहुत श्रेष्ठ
 प्रकार प्रेय पूर्वक प्रण कराई हुई रत्नों के फरह [तिगोरी] सामान भियकारी, घर बजुरपर पिटु
 पर को भाती हुई पितृ घर से बजुर पर को जाती हुई उस के भागे पीछे दास दासी आदि का बन्ध
 होये यावत् नर एक को बोलने और धार पांच बठ भाये, क्या बस्तु तुम स्वादिष्ट है ?

एतेसिण अण्णयरसि कुलसि दारियत्ताण पद्यायति, साण तत्थ दारिया भवति
मुकुमाला जात्र सुरूवा ॥ ततेण तं दारिय अम्मापियरो उमुक्कबालभावे जाव विण्णाय
परिणायमिध जोव्वणग मणुपसे पडिरूव्वेण सुक्केणं पडिरूव्वेण भत्तारस्स
मारियत्ताए दलयंति, साणं तरस्स भारिया भवति, एगा एग जाया इट्ठा कंता जाव रयण
करडग समाणी, तीसे जात्र अतीजायमाणीएवा निजायमाणीएवा, पुग्गो मह
दासीदास जात्र किं ते आसगरस्स स्रदति ॥ ३१ ॥ तीसिणं तदहप्पगाराए इत्थयियाए

हो, ऐसे वचन अन्य किनी प्रकार के फूल जाती में पुत्री पने वत्पन्न होवे, वह वहां लडकी सुकोमल
मुरूप दरीर की धारक होवे तब वह लडकी वात्स्यावस्या से मुक्त हो विज्ञान अवस्था को परिणामित
हो यौवन अवस्था को प्राप्त हो, यथा उचित प्रतिकूल मुरूप की धारक होगी तब उस को दान में देवे
प्रतिकूल यथा वक्षिण पुत्रक को भरतार बनावे, उस को भारिया बनावे, तब वह एक ही मारिया होवे
अर्थात् उस पर दूसरी श्रोक न होने से अकेली अपने पति को इष्ट कृत प्रिया मनोहर यावत् रत्नकरंड के
समान होने जिस वक्त वह कहीं जायेगा या आवेगा तब उस के आगे पीछे बहुत दास दासी यावत्
क्या आशा देते हो! यहां तक करना उस नियाने के प्रमाण से वह स्त्री उक्त श्रद्धि पावे ॥ ३१ ॥ प्रश्न

पुरादिगच्छाण जाव सयपरकममाणे पासिज्जा इमाओ इत्थिया भवति एगाण्गजाया जाव
 किं ते आसगरस्स सदति, जं पासिता निगंथे निदाण करेइ दुक्ख खलु पुमत्ताए, इत्थि-
 तणयं साहु जे इमे उग्गपुच्चा महामाउया भोगपुत्ता महामाउया एतेसिण अण्णयेरेसु उच्चा-
 वएसु महासमरसगामेसु उच्चावयाइ सत्थाइ उरसिचेव पडिसवेवेति, तं दुक्खं खलु पुमत्ता-
 णय इत्थियाणसाहुज्जइ, जइइमं तव नियम वमचेरवासस्स फलमिच्चित्रिसेसे अत्थिवयमवि-
 प्रकार की विज्ञा में निर्ग्रय उपस्थित होते हैं अंगीकार कर विचरते हैं वे सुधादि परिपह देवादि
 उपसग मोहोदय आदि का पराजय करते हैं उन के देखने में आवे—यह स्त्री एकाकी है पति को
 अत्यन्त प्रियकारिणी है यावत् एक बोलाये चार पाँच आशा प्रश्न करने तत्पर होते हैं इस प्रकार
 उस को देख नियाना करे कि—निश्चय कर पुरुषपना है वह तो बड़ा दुखपायी है उसे अनेक संसा-
 रि कर उठाने पड़ते हैं परंतु स्त्री का जन्म है सो सुखदायी है—अच्छा है, प्रत्यक्ष देखाता है जो इस
 जगत में उग्र कुलोत्पन्न पुत्र है महा माता से जन्म पाये हुये हैं भोग कुलोत्पन्न पुत्र हैं महा माता से जन्म
 पाये हुये हैं इत्यादि में अन्य को ऊँच नीच संग्राम उत्पन्न हुये उस महा समर संग्राम में ऊँच नीच
 पद्मादि नीच बाणादि अस्त्रकर हृदय भेदने से महा दुःख को नेवते हैं इत्यादि
 दुःख पुरुषों को भी होता है परंतु स्त्रियों को नहीं होता है, इसलिये स्त्री का जन्म ही अच्छा है जो

तद्दाम्ब्ये समर्णेवा माहर्णेवा नभओकार केवलि पण्णसं धम्म माइक्खेजा ? हता
माइक्खेजा ॥ साण मत्ते ! पडिसुणेजा ? णोइणट्टे समट्ठे, अमवियाणं सा तस्स
धम्मस्स सयणयाए सेयं भवति—माहिष्ठा महारभा महापरिगाहा जाव वाहिण
गामिए षेरइए आगमिस्साए दुलभ वोहिियाश्वि भवति एव खलु समणाउत्तो !
तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावफलविवागे जं णो संचाशति केरली पण्णत्त धम्म
पडिसुणेजा ॥ २ ॥ ३ ॥ एवं खलु समणाउत्तो ! मएधम्मो पण्णत्ते-इणमेव निगंगय
पावयणे जाव अतं करेइ जस्सणं धम्मस्स निगंगे सिक्खाए उवट्ठिए विहरमाणे

उस को तथारूप श्रमण माहण केवली प्राणित धर्म मुना सकते हैं क्या ? हां मुना सकते हैं वह ही धर्म मुन सकती है क्या ? अहो छिप्य ! यह अर्ध योग्य नहीं बयाव नहीं मुन सकती है उस नियाने के योग्य वह धर्म मुनने के अयोग्य होती है, महाइच्या गुणा महा आरंभ महा परिग्रह करके दक्षिण दिशा की नरक में उत्पन्न होती है और आगमिक काल में षोडशीय सम्यक्त्व की प्राप्ति उसे दुर्लभ होगा ॥ अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियाना का इस प्रकार पाप रूप फल का विपाक होता है, वह केवली प्राणित धर्म मुन ही नहीं सकती है ! ॥ ३ ॥ १० ॥ यों निधाय, बड़ो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने इस प्रकार धर्म कहा है यह निर्बल के पक्षन है पापत अन्त के करनेवाले हैं, इस धर्म की दोनों

परादिगच्छाए जाव संयंरक्कममाणे पासिआ इमाओ इत्थिया भवति एगा एगजाया जाव
 किं ते आसगरस सदति, जं पासिता निगंथे निदाण करेइ दुक्ख खलु पुमत्ताए, इत्थि-
 तणय साहु, जे इमे उगगपुत्ता महामाउया मोगपुत्ता महामाउया एतेसिणं अण्णयेरेसु उच्चा-
 धएसु महासमरसगामेसु उच्चावयाइ सत्थाइ उरसिचेव पढिसंवेदेति, तं दुक्खं खलु पुमत्ता-
 णय इत्थीयाणसाहुज्जइ, जइइमं तव नियम वभवेरवात्सस्स फलमिच्चित्तिसेसे अरियवयमवि
 प्रहार की गिला में निर्ग्रय उपास्थित होते हैं अंगीकार कर विचरते हैं वे सुधादि परिपह देवादि
 उपसग मोहोदय आदि का परांजय करते हैं उन के देखने में आवे—यह स्त्री एकाकी है पति को
 प्रत्यन्त प्रियकारिणी है यावत् एक बोलाये चार पाँच आशा ग्रहण करने उत्तर होते हैं इस प्रकार
 उस को देख निपाना करे कि— निधाय कर पुरुषपना है वह तो बड़ा दुःखपायी है उसे अनेक संसा-
 रिक कष्ट उठाने पड़ते हैं परंतु स्त्री का जन्म है सो सुखदायी है—अच्छा है, प्रत्यक्ष देखाता है जो इस
 जगत में उग्र कुलोत्पन्न पुत्र है महा माता से जन्म पाये हुवे हैं मोग कुलोत्पन्न पुत्र हैं महा माता से जन्म
 पाये हुवे हैं इत्यादि में अन्य को ऊँच नीच संग्राम उत्पन्न हुवे उस महा समर संग्राम में ऊँच नीच
 लड़ादि नीच बाणादि शस्त्रकर हृदय भेदने से महा दुःख को वेदते हैं इत्यादि
 दुःख व पुरुषों को भी होता है परंतु स्त्रियों को नहीं होता है, इसलिये स्त्री का जन्म ही अच्छा है जो

आगमेत्साणं जाव इमेयात्त्वाद् उरालाद् इत्थिभोगाद् भुजिरसामो सेतसाहु ॥ ३३ ॥ एवं
 खलु समणाटसो निगंधे निदाणकिष्वा तस्सठणरसअणालोइय अपण्डि कते जाव अपण्डि-
 धञ्जिचा कालमासे काल किष्वा अण्णपरसु देवलोणसु देवचाए उववपारो भवति, जाव सेण
 तत्थ देवे भवति महिङ्गिए जाव विहरति ॥ ३४ ॥ सेणं ताओ देवलोणाओ आठक्खएणं
 भवक्खएण जाव अण्णपरसि कुलसि धारियचाए पच्चायति, जाव तेण धारिय जाव
 भारियचाए दलयति, साण तस्स भारिया भवति, एगा एग जायाजाव तेहव सत्वं

मेरे इस वष नियम प्रसवर्ष का क्रम आगमिक काल में प्राप्त हो तो मषिय काल में उक्त प्रकार की स्त्री
 जैसे सुत्र मोक्ता स्त्री होई उदार प्रधान स्त्री संबंधी योगोपयोग योगवती हुई विचके यह साधु
 आश्रित करे ॥ ३३ ॥ यों निम्न्य करो अयण आयुधम्नो ! यों साधु नयाना करते हैं इस नियमके
 स्थान की आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना प्रायोश्चित्त लिये बिना काल के अवसर में आयुष्य पूर्ण
 देवलोक में महा शक्ति योक्त महा सुख का मोक्ता वेवता होता है ॥ ३४ ॥ इस देवलोक से आयुष्य
 का भव का स्थिति का समय कर यावत् ऊच कुल में पुष्पिने उत्पन्न होवे यावत् यह कन्या को पतिके
 सुपुत्र करे, यह इस स्त्री भार्या बने, एकाकी यावत् उक्त प्रकार सप कहना यह पर के बाहिर जात

भाणियन्त्रं ॥ तीसरेण अहंजायमाणीएवा जाव किं ते आसगस्स सदति ॥ ३५ ॥ तीसेण तह-
 प्यगाराए इरियथाए तहास्वे समणेवा माहणेवा धम्म आइक्खे जाइहाता आइक्खे जाव
 साण पडिसुणे जा? जो इणट्टे समट्टे अभवियाणं, सा तस्स धम्मस्स सवणयाए, साय भवति
 भदिच्छा जाव दाहिणगामिए गेरइए, आगमेस्साण दुइम बोहियाए विभवति ॥ ३६ ॥ एवस्सलु
 समणाउत्तो ! तस्स निदानस्स इमेयास्वे पावफल निवागे भवति ज जो संचाएति
 केवल पणच धम्म पडितुणिचए ॥ ३७ ॥ एव स्सलु समणाउत्तो ! मए

आते पीछी दास दासी आवे का परिवार उस के साथ रहे यावत् एक बोझाने से चार पांच आवे
 क्या आमा देते हो ऐसा कहे ॥ ३५ ॥ अत्र—यह इस प्रकार की स्त्री साधु याग के पास केवली
 प्रणित धर्म श्रवण कर सके ! यह अर्थ योग्य नहीं अर्थ धर्म श्रवण करने योग्य नहीं होती है, परंतु यह
 महा इच्छा महा परिग्रह से दक्षिण दिशा की तरफ में उत्पन्न होवे आगाधिक काल में दुर्लभ बोधी होने
 ॥ ३६ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुधन्तो ! तब नियाने के फल इस प्रकार विपाकरूप होते हैं
 यावत् केवली प्रणित धर्म की प्राप्ति नहीं कर सकता है ॥ ३७ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयु-
 धन्तो ! मैं पम रहा यह निर्णय के प्रवचनों की आराधना कर यावत् सब दुःख का अंत करते हैं

नाम ए अर्थ ये सियातिवा, अवाढग पेसियातिवा, मातुर्लिंग पेसियातिवा, मसयेसियातिवा
उच्छुखाडियातिवा सयलि फलियातिवा बहुजणस्स आसासणिजा पच्छणिजा पीहणिजा
अभिलसणिजा एवमेव बह्मथिकावि बहुजणस्स आसासणिजा जाव अभिलसणिजा
ते दुक्ख खलु इत्थितण ए पुमत्तणयं साहु जइ इमस्स तवणियमस्स
जाव आरिय अहमयि आगमेस्सणं इमाइ एतारूवाइ पुरिस भोगाइ भुजिस्सामो सेत
साहु ॥ १ ॥ एवं खलु समणाउत्तो ! निगथी णिवाणकिंवा तस्स ठाणस्स अणालोइय अप्प-
डिक्खता जाव अपाडवजिन्ता, कालमासेकालकिंवा अण्णयेरसु देवलो ए सु देयचाएउववचरो

लोगों के भावदानीय होते हैं बहुत खाना चारते हैं, बहुत इन की मार्ग प्रेक्षा करते हैं बहुत इन की
प्रशिक्षापा करते हैं, इस ही प्रकार जगत् में स्त्री जाति की भी बहुत लोगों को आस्य देने (भाग देने)
योग्य होती है, प्रायः योग्य देखने योग्य, अभिलाषा करने योग्य इति है, अर्थात् स्त्री का कहीं भी
चेत नहीं परने रोक है इसलिये निश्चय ही जाति यही दुःखदायी है, परन्तु पुरुषपना बहुत
प्रयत्न इस लिये यदि जो मेरे तप संयम द्वापरचर्य के फल प्रविष्ट काल में होवे तो मैं भी
प्रागपिक काल में इस प्रकार पुरुष होकर सुखोपभाग की मोक्षा बनतो प्रयत्न ॥ १० ॥ यों निश्चय
अहो भ्रमण प्रागुप्यन्ते ! साध्वी नयाना कर के उस स्थान की आलोचना प्रतिक्षण किये बिना काल
के अप्रमर में काल करके अन्य किसी देवलोक में देवता पने अन्तार म्नेता है यहाँ पर देवता

धम्म पण्णसे इणमेव निगगथ अतपावयणसेच्च जावे केरति जत्तसणं धम्मस्स निगगधिए
 सिक्खाए उवट्ठियावहरमाणी पुगविगिच्छाए जाव उदिण काम जाययावि विहरेज्जा ॥ ३८ ॥
 साय परक्कम्ममाणी पसेज्जा स जे इमे उगगपुष्ठा महामाठया तेसिण अणत्त
 रत्तस अइजायमाणेवा २ जाव किं ते आत्तगत्तस सदति ज पासिचा निगगयी निदाण
 कोइ दुक्ख खलु इत्थिचणए दुत्तस्सवाइ जाव गामंतराइ जाव सन्निधेसंतराइ, सेजहा
 उस धर्म की दोनों प्रकार की श्रित्तार्थे निर्द्वयी साध्वी सावधान होती है यावत् विचरती है वे प्रथम बुधादि
 पारेषा देनादि उपनग मार्गदय कामेच्छा को समयाय से जय करते हुये विचरते हैं ॥ १८ ॥ यों सदैव
 पराक्रम करते हुब देखे कि वे जो यह होते हैं उग्रकुलोत्पन्न महा याता के पुत्र, भोग कुलोत्पन्न महा
 माता के पुत्र इन में कोई भी घर के बाहिर जाते या पीछा घर में आते नब बहुत दास दासीयों साथ
 रहते हैं यावत् एक को बोलाने से चार पांच खड़े होते हैं वे पूछते हैं आप को किस की इची है ॥ १९ ॥
 उक्त प्रकार गृहस्थ के मुत्सोपयोग देखकर साध्वी नियाना कर कि स्त्रीपते में तो बड़ा दुःख भोगवना
 पड़ता है कहीं स्वेच्छा से आवागमन कर सके नहीं यावत् स्वेच्छा से ग्रामानुग्राम यावत् सन्निधेस आदि में
 फिरमके नहीं कदापि आवागमन कर तो स्त्री जाती कैसी है कि यथा इष्टान्त—भैसे याम्ब के फल,
 मम्बनी के फल, वीजारे के फल, रस जाति फल, इष्ट के दुइदे, साबली वृक्ष के फल यह फलों बहुत

माणेहिं माणुस्सएहिं कामभोगोहिं निवेयगळेजा माणुस्सगा खलु कामभोगा अधुवा
अणितिया असासया सढण पढण विद्धसण धम्मा, उच्चार पासवण खेल जह्ल
सिंघाण नंत रिच सुक्क सोणिय समुग्गभावा, दुरुवा उस्सास निस्सास दुरुत्त मुच
पुरिस्स पुष्पा वतासवा पिचासिवा खेलासिवा जह्लासिवा पुष्पा पुव्वचणं अवस्स-
विपपजहणिज्जा, संति देवा उट्ठु वेवल्लोर्गसि तेणं तस्य अण्णेसिं देवाण
देविओ अभिजुजिय २ परियारेति अप्पणा चेव अप्पणा वेउल्लिच्चा २

करते हवे मनुष्य सम्बन्धी ये काम भोग से वैराग्य भाव को प्राप्त हुवे वे विचार करें कि-यों निश्चय मनुष्य
सम्बन्धी काम भोग अप्रब्र मनित्य आदाश्चर्य सद्गती पहनी विध्वंसनाही इन का धर्म [स्वभाव] है यह
मनुष्य का गरीर विग्रामूष श्रेष्ठ स्वप्न सेढा समन पित कुल रक्त इत्यादि अशुची का स्थान है देखने
में ही दिग्न देखते हैं चन्दास निभास भी दुर्गन्धमय आते हैं विष्ट मुक्कर पूर्ण मरा हुवे है समन पित
श्रेष्ठ भेद सदैव श्रवता-वहता है और इन को आयुष्य पूरा हुवे पहिले व्याधी वियोग हुवे तथा
आयुष्य पूर्ण हुवे अवश्य छोडने ही पडते हैं, इस से तो अच्छे वे हैं जो उर्ध्व वेवल्लोर्ग में देवता हैं तहां वे
अप्य किसी देवता की देवीको अपने पश में करके सब प्रकार भोग भोगत है तथा आप स्वय ही यह देव

भवति सेण तरथ दये भवति, महिषिण्ण जाव चइसा, जेहमे उग्गपुत्ता तहेव
 वारए भवति जाव किंते आसगस्स सदति तस्सण तहप्पगारस्स पुरिसरस जायस्स जान
 अमविण्णं, से तस्स धम्मस्स सवणयाण, सेत भवति महिष्ठा जाव पस्सिमुणिचए
 जाव दाहिण गामिपेरेइए जाव दुल्लभ बोहियाएवि भवति ॥ ४ ॥
 ॥ ४० ॥ एवं खलु समणाठसो ! मएघम्मे पणस्से, इणमेव निगंथे पात्रयणे
 तहेव जस्सण धम्मस्स निगययीवा सिक्खाए उवाट्टए विहरमाणे पुरादि-
 गिष्ठाए जाव उदिण्ण कामभोगे विहरेज्जा, ॥ ४१ ॥ सेयं परक्कमेज्जा तेथ परक्कम-

पराक्रुद्धित सुल का मोक्ता होता है यावत वहां से बचकर यहाँ तककुल में पूर्वोक्त प्रकार पुत्र पने
 होवे यावत् ब्रह्म प्रकार मुल का भोगवने बान्ना बन वहाँ उस परूप को साधु भगवान परमोपदेश सुनावे
 परंतु यह सुते नहीं प्रम प्रपन करन के प्रयोग्य होता है परंतु बरा परा इच्छा बान्ना यावत् वसिष्ठदिक्षा
 की नरक में उत्पन्न होता है यावत् आगमिक काल में दुर्लभ बोधी होता है ॥ यों निश्चय इस प्रकार
 निपाना करनेबाला केबन्धे प्रणिता धर्म भवण याव भी कर सकता नहीं है ॥ ४० ॥ यों निश्चय
 प्रतो श्रमण आपुष्मन्तो ! मैने धर्म कहा यह निब्रन्य के प्रवचन यावत् सब दुःख के भन्त के करता है
 इस ही प्रकार यावत निग्रन्य-साधु अथवा साध्वी कोनो प्रकार की शिक्षा में सावधान हो परिपर उपसर्ग
 बोधोदय का परामथ करते हैं संयम धर्म में पराक्रम फाटते है ॥ ४१ ॥ इस प्रकार संयम में पराक्रम

अप्रयत्नाच्चैव अप्पाण विडविचा २ परिपारति अप्यर्णागियाए अभिजुज्जिग्रह परिपारोति
जाव तचेव पुमचार पयायति जाव किं ते आसगस्ससपति ॥ ४३ ॥ तस्सण तह-
प्पागस्स पुरिस जायस्स तहारूवे समणेवा माहणेवा जाव पडिसुणेज्जा ? इत्ता
पडिसुणेजा, सेणे सदहेज्जा पतिइजा रोएज्जा ? जो इण्णहे समट्ठे अभविण्णं सेय तस्स
धम्मस्स सदहणाए ३ सेय भवति महिष्ठा जाव साहिणगामीए नेरइए, आगमेस्साएण
दुहमवोहिइयावि भवइ ॥ एव खलु समणाउत्तो ! तस्स निषाणस्स इमेयारूवे पावफलवि

इए वैक्रम कर परस्पर भोग को, तथा अपनी देवी को अपने ब्रह्म में कर भोग कर
वहाँ से चक्कर पुरुषपने उत्पन्न होते वह पर से निकल गमनागमन करे तब उस के साथ बहुत बातें
वासी रहे पावत एक दोस्तों के चार पाँच आते हों ? यों कोई इस प्रकार सुख पावे ॥ ४३ ॥
प्रश्न—उक्त प्रकार के नियमों को कौन साधु ग्रन्थों में पढ़े करे तो वह उसे श्रवण
करे क्या ! हो श्रवण कर सकता है प्रश्न—यह उस धर्म पर श्रद्धा प्रतीति है कि कर सकता है क्या ?
यह धर्म योग्य नहीं अर्थात् श्रद्धा प्रतीति कभी नहीं कर सकता है यह सम्यक्त्व प्राप्त करने योग्य नहीं
हता है यह कबली प्राणित धर्म की श्रद्धा प्रतीति कभी नहीं करता हुआ वह महा इच्छावाला पावत
इतिहास दिशा की नरक में उत्पन्न होनेवाला होता है, उसे अधिकार में योग्य भीष की प्राप्ति दुर्लभ होती है

परियारेति अप्यणाप्रजितियाए देवीए अभिजुजियरे परियारेति ॥ जइ इमस्स तव तंचेव
सव्व भाणियव्व जाव वयमवि आगमेस्साण इमाइ एतास्वाइ दिव्वाइ भोगभोगाइ
भुंजमाणे विहरामो, सेतं साधु ॥ ४२ ॥ एव खलु समणाउत्तो ! निग्गयीवा
निग्गयीवा णिदाण किञ्चा तस्स ठाणस्स अणालोदय अपठिक्कते कालमासे काल
किञ्चा अण्यारेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति तंजहा—महिद्धिण्ण महज्जु-
इएसु जाव पभासेमाणे, सेण अण्णेत्ति देवाण अण्णवेवि अभिजुजिय परिवारेइ

अपने दो रूप स्त्री का और पुरुष का वैक्रम करके परस्पर मोग करे तथा अपनी देवी को अपने बन्ध
में करके उस के साथ मोगकरे इस स्त्रिये जो मेरे इन तप अभियग्रह ब्रह्मचर्यादि का फल भविष्य में होवे
मुझे उक्त प्रकार का देवतापना प्राप्त होवे जिस से मैं भी वेसे मोग योगवता विचरूं, ऐसा साधु नियाना
करे ॥ ४२ ॥ यों निश्चय भरो अग्रण आयुष्यन्तो ! साधु अथवा साध्वी उक्त नियाना कर उस
स्थान की आलोचना प्रतिक्षण किये बिना काम के बरसर में आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी देवसेक
में देवता पन उत्पन्न होये यह यहा अद्विष्ट यहा युतिवत् यावत् दक्षों विद्या में प्रकाश करता हुआ
अन्य देवता की देवी को भी अपने बन्ध में कर मोगवे अथवा अपने ही स्त्री पुरुष के दो

अपणचिव अत्थाण विउत्तिवा २ परिचारिणि अपण्णोणिमाए अभिजुजियइ परिचारिणि
जाव तचेव पुमत्तार पचायसि जाव किं ते आसगस्ससदति ॥ ४३ ॥ तत्सण तह-
प्पगारस्स परित्ति जायस्स तहारूत्वे समणेवा माहणेवा जाव पडिसुणेवा ? इत्ता
पडिसुणजा सेणं सदहेवा पतिइजा रोएवा ? जो इण्णहे समट्ठे अमत्तिणं सेय तत्स
धम्मस्स सदहणाए ३ सेय भवति मदिइत्ता जाव वाहिणगामीए नेरइए, आगमेस्साएणं
दुह्ममयोहिण्णायि भवइ ॥ एव खलु समणाउत्तो ! तत्स निदाणस्स इमेयारूत्वे पावफलवि

इय वैक्रम कर परस्पर भोग करे, तथा अपनी देवी को अपने वश में कर भोग कर
वही से चरकर पुरुषपत्ने उत्पन्न होते वह घर से निकल गमनागमन करे तब उस के साथ बहुत दास
दासी रहे पावत् एक बोलते चार पाँच क्या चाहते हो ? यों करे इस प्रकार सुल पावे ॥ ४३ ॥
प्रश्न—उक्त प्रकार के नियम करनेवाले पुरुष को जो कोई साधु महान धर्मोपदेश करे तो वह उसे श्रवण
करे गया ! हो श्रवण कर सकता है प्रश्न—वह उस धर्म पर श्रद्धा प्रतीति रुचि कर सकता है क्या ?
पर प्रर्थ योग्य नहीं भयात् श्रद्धा प्रतीति रुची नहीं कर सकता है वह सम्यक्त्व प्राप्त करने योग्य नहीं
हता है वह रुचसी प्राणित धर्म की श्रद्धा प्रतीति रुची नहीं करता हुआ वह महा इच्छावाला पावत्
दक्षिण दिशा की नरक में उत्पन्न होनेवाला होता है, उसे भविष्य में बोध भीम की प्राप्ति दुर्लभ होती है

तत्रनियम तंचय सत्त्वं जात्र सेण सबहिज्जा पतिपुज्जा रोएज्जा ? णो इणट्टे समट्टे
अण्णथरुइ ? मायापु सेयं भवति ॥ स जे इमे आरण्या आवासियाण गामणियतिवा
कहिं रहास्सिया णो यहुसजया णो यहुपडिबिरया सव्वपाणभूयजीवसत्तेसु ते अप्पणा
सचामोसाइं एवं विपडिअवति अह ण हंतव्वो अण्णेहंतव्वो, अह नअज्जावेयव्वो
अओ अज्जावेयव्वो अहं नपरित्तवेयव्वो अओ परित्तवेयव्वो अह नपरिघेतव्वो,
अओ परिघेतव्वो, अह नउहवेयव्वो अओ उहवेयव्वो, एवामेव तं इत्थिकामेहिं मुचिन्त्या

प्रकार के देवता हो योग योगवत हैं इहाँ से चक्कर मनुष्य होते हैं वे श्रमण ब्राह्मण का उपदेश सुनते हैं परंतु श्रद्धा प्रतीत कभी नहीं कर सकते हैं वह जैन धर्म को छोड़कर अन्य धर्म को करने की रुची थाभा होवे किस प्रकार के धर्म की कल्पि होवे यह कहते हैं—जो इसे ब्रह्मण्य [वन] में बास करने-वाले तपस्वी अथवा ग्राम के नजीक में रहनेवाले तपस्वी किसी का] में रहस्य के करनेवाले [अज्ञात] को गुप्तपदे से बचनेवाले] विशेष उन के संन्यास नहीं, विशेष उन के द्रव नहीं (बोधा २ इन्द्रिय संन्यास व्यवहारिक द्रव प्राप्त होते हैं परंतु सम्पत्त्य न होने से गिनता में नहीं लिये) सर्व प्राणी मृत जीव सत्य की घात से निवृत्त नहीं, इस प्रकार अपनी माया को रखते हुवे सत्यपुत्रा-मिश्र माया बोलते हैं, आगे कहेंगे ऐसी निषीध माया बोलते हैं—इस वचन में इस पिये इस को मत मारो, परंतु अन्य माधवियों को

गिद्धा गठिया अश्वोच्चयणा जाव कालमासे कालांकिद्या अण्णयराई असुराइ किञ्चिसियाइ
ठाणाइ उववचारे भवति॥ ते तओ विप्यमुचमाणा मुजो २ पलमूयचाए जाव पचायति
॥ ४५॥ त एवं खलु समणाउसो। तस्स निवाणस्स जाव ते संघापति केवल्लिपण्णसधम्मं
सद्दिच्छुएवा ॥ १ ॥ ४६ ॥ एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मो पण्णये जाव
माणुस्सगं खलु काममोगा अधुवा तद्देव सति उट्ठदेवा देवलोगसि णो अण्णेसि
मारो एम को दहादि का प्रहार मत करो, अन्य को करो एम को किसी प्रकार परिचाप मत उपज
अन्य को उपजावो हमारी दासादि की तरह प्रहणा मत करो, अन्य की प्रहण करो, एम को वि
प्रकार कर उपद्रव मत करो अन्य को उपजव करो इस प्रकार के अपना प्रला और अन्य का नुरा
ऐसा बोलते हैं वे साखी की मंथी काम मोग में मूर्च्छित हैं गुदि बने हैं, ऐसे न वे कास
भरसर में आयुष्य पूरा कर अन्य किसी असुरकुमार (सुवनपति) देव में तथा किस्विय देवता
उत्पन्न होते हैं और वां से घर कर भागे बारम्बार बफर में पने गूंगू बोबरेपने उत्पन्न होते हैं ॥ ४७
इस स्थिय यों निश्चय, भरो अमण आयुष्यन्तो ! उक्त नियाने का करनेवाला केपुमा प्रणित पर्यं
अदा प्रतीत कची करने समय नहीं होता है ॥ १ ॥ ४८ ॥ यों निश्चय भरो अमण आयुष्यन्तो !
पर्यं करा पारत् सब दुःख का क्षय करता है उसे सायु साखी पाने वे मनुष्य संखी काय मोग

देवान, अणदेवी अभिजुजिय २ परियारेति जो अण्णा चैव अप्पाणं
नेउज्जिय २ परियारेति, नो अण्णोचियाणं देवीए अभिजुजिय २ परियारेति।
जति इमस्स तयनियम तचेव जाव एवं खलु समणाउसो ! निगंघोवा निगंघीवा
निगणकिच्चा तस्स ठाणस्स अणालोइय तचेव जाव विहरति, सेणं भवं अण्णभव
अणोदेनो नो अण्णं देवीण अभिजुजिय २ परियारेति, जो अण्णोचिव, अप्पाण
वेउज्जिय २ परियारेति सेण ताओ देवलोगाओ आउक्खएण तहेव णवर इता
सदहज्जा पतियएज्जा, रोएज्जा, सेण सीलज्जय गुण वेरमण पच्चक्खाण पोसहे

अण भनित्य नाने [इत्यादि कथन पूर्वोक्त प्रकार कहना] परंतु ऊर्ध्व देवलोक निवासी जो देवता हैं
वे कैसे हैं ? तो अन्य की देवी को अपने वश में कर भोगवते हैं और न अपन दो स्त्री पुरुष के रूप
बनाकर भोग करते हैं परंतु अपनी देवी का वश में कर भोग भोगवते हैं जो मेरे तप नियम का फल
हो जो मैं भी इस प्रकार का दान हूँ यों निश्चय, अब अण्ण आयुष्यन्तो ! साधु साथी नियाना कर
उम स्यान् की आलोचना प्रतिक्रिया किये बिना आयुष्य पूर्ण कर उस ही प्रकार के देवता हवे वहां से
आयुष्य पूर्ण कर मनुष्य होवे वह अण्ण यज्ञाण के पास धर्म अण्ण कर सके वस की रुची भी कर सके
परंतु पाँच अनुगत तीन गुणगत चार धिमागत रूप आसक धर्म को अंगीकार नहीं कर सके पौषधोपवा-

क्यासाइ पठिव्रजेजा जो इणट्टे समट्टे सेग इसण सावण् रुवति, अभिगय जीया
 जीवे जाव अट्टमिजा पेमाणुरागरसे अयमाठसो ? जिग्गथे पात्रयणे अट्टे अय-
 परमट्टे सेसअणट्टे भेणं एयारुत्तेणं निदारेणं विहरमाणे बहुइ वासाइ समणोवासग परि
 याग पाठणइ बहुइ वासाइ समणोवासग परियाग पाठणिचा कालमासे काल
 किचा अण्णयेरेसु दवलेएसु देवचाए ठववत्तारो भवति, ॥ ४७ ॥ एवं खलु
 समणाउत्तो ? तस्स निदाणत्स, इमेयान्त्वे पावफल विवागे ज जो संचाएति,
 सीलब्बय गुण धरमण पच्चक्खाण पोसहोयवासाइ पढिव्रजिचए॥ ४८ ॥ एव खलु समणा

तोहि द्रव प्रत्याख्यान भी नहीं कर सके फक्त बर वर्धन [सम्यक्स्त्री] श्रावक ही होता है जीवा-
नीर का जान होता है यावत् उस इष्टी की भिनियों भी जिन प्रणित धर्म में परमानुरागरक्त हो वैसा
होना है वह वातावाप के प्रसंग में कहता है कि-प्रहो आयुष्यन्तो ! निर्णय के प्रवचन रूप धर्म है यही
अप है वही परमार्थ है श्रेष्ठ अनर्थ है वह इस प्रकार सम्यक्त्व धर्म के व्यनहार में वर्तता हुआ बहुत बड़े
पर्यंत श्रमणोपासक की वय य का पालन कर, कासके अवसर आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी वेधश्लोक में
देवताःने उत्पन्न होते ॥ ६७ ॥ यों निश्चय, ग्रहो श्रमण आयुष्यन्तो ! उस नियान के इस प्रकार पाप
रूप छुट निपाक होते हैं- वह श्रावक के वारह प्रथ पापपापवासान्ति नहीं कर सकता है ॥ ७ ॥ ६८ ॥

उसो? मएधमेपणत्ते तच्च सब्ब जावसेय परक्खमेमाणे देवामाणुस्सएहिं कामभारेहिं निवे-
यगग्घेज्जा, माणुसगस्स खलुकामभोगा अधुवाअणितिया असासय जाव विप्पजह्णिज्जा,
दिव्यावि खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासया चलाचयणधम्मा पुणरागमणिज्जा,
पच्छापुब्बचण अवरसविप्पजह्णिज्जा, सति इमस्स तवणियमरस्स जाव आगमेस्साणं
जइ इमे भवति, उग्गपुत्ता महासाउया भोगपुत्ता महाभाठया जाव पुमच्चाए पच्चायंति,
तरथण समणोवासए भविरसानो अभिगय जीवाजीवे जाव फासुएण एसणिज्जेण
असणं पाणं खाइम साइमेण पढिदाभेमाणे विहरइस्सानो, सेच साहु

यों निश्चय, भगो ब्रम्हण आयुष्यन्तो ! मैंने धर्म का यावत् उस में साधु साथी पराक्रम कोइते हैं वे देवता सर्वेश और मनुष्य संबंधी काम योग करते हैं वे विचार करते हैं कि—मनुष्य संबंधी काम माग भी अधुष अनित्य हैं छोड़ने योग्य हैं, ऐसे ही देवता संबंधी काम माग भी अधुष अनित्य मन्दाभूत हैं सर्व फलविजय स्वधर्मपारी हैं सुख के दुःख रूप होसवि हैं फर्मादिय होते जीते ही और परे पाव भी अवश्य छोड़ने पढ़ते हैं इसलिये जो मेरा सप नियम ब्रह्मचर्य का फल मरिचिक काल में होने तो मैं उग्रकुम्भोत्पद्य महामाता के पुष भोग कुलोत्पन्न यहा माता के पुष यावत्

ब्रह्मासाइ पढिवेबेजा, जो इण्टे समेटे सेग वसण सावण इवति अभिगय जीवा
 जीवे जाव अट्टमिजा वेमाणुरागरचे अयमाठसो ? णिगथि पावयणे अट्टे अयं-
 परमेटे सेसअण्टे, भेण एयास्वेण विहारण विहरमाणे बहुइ वासाइ समणोवासाग परि-
 याग पाठणइ बहुइ वासाइ समणोवासाग परियाग पाठणिच्चा कालमासे काल
 किच्चा अण्णपरेसु देवलोएसु देवचाए उववचारो भवति ॥ ४७ ॥ एवं खलु
 समणाउसो ? तत्स निदानस्स, इमेयान्वे पावफल विवागे ज णो संचाएति,
 सीलव्वय गुण वैरमण पच्चक्खाण पोसहेनवासाइ पढिवजिचए॥७४८॥ एव खलु समणा

सादि व्रत प्रत्याख्यान भी नहीं कर सके फक बर दर्शन [सम्यक्त्वी] आबक ही होता है जीवा-
 श्रीर कम जान होता है यावत् उस इंडी की मिजियों भी जिन प्रणित धर्म में परमानुरागरक्त हो वेसा
 होता है बर बार्तालाप के प्रसंग पे कहता है कि—महो आयुष्यन्तो ! निर्ग्रय के प्रबचन रूप धर्म है वही
 अर्थ है वही परमार्थ है श्रेष्ठ अनर्थ है बर इस प्रकार सम्यक्त्व धर्म के ध्यानहार में वर्तता हुआ बहुत वर्ष
 पर्वत धामणोपासक की वर्यय का पासन कर, कालके अपसर आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी देवलोक में
 देवता ने उत्सन्न होये ॥ ८७ ॥ यों निर्ग्रय, महा श्रमण आयुष्यन्तो ! उस नियान के इस प्रकार पाप
 रूप फल विपाक होते हैं बर आबक के बारद व्रत पापघापवासादि नहीं कर सकता है ॥ ७ ॥ ८८ ॥

उत्सो? मरुधम्मपण्णत्ते तच्च सन्व जाव सेय परक्कमेमाणे देवामाणस्स एहिं कामभार्गेहि निवे-
यगग्घेज्जा, माणुसगस्स खलुकामभोगा अधुवा अणितिया असासय जाव त्रिप्पजहणिज्जा,
दिव्यावि खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासया चलाच्चयणधम्मा पुणरागमणिज्जा,
पच्छापुन्वचण अवसरत्तिप्पजहणिज्जा, सति इमस्स तवणियमरस जाव आगमिस्साण
जइ इमे भवति, उग्गपुत्ता महामाठया भोगपुत्ता महामाठया जाव पुमचाए पच्चायति,
तत्थण समणोवासए भविरसानो अभिगय जीवाजीवे जाव फासुएणं एसणिज्जेण
असणं पाणं स्वाइम साइमेण पढिलभेमाणे विहरइस्सामो, सेच साहु

यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने पर्यं कहा यावत् उस में साधु साध्वी पराक्रम को देते हैं वे
देवता सर्वधी और मनुष्य सर्वधी काम भोग से निवृत्ति धारण करते हैं वे विचार करते हैं कि-मनुष्य
सर्वथा काम माग भी मनुष्य अनित्य हैं अशाश्वत हैं छोड़ने योग्य हैं, ऐसे ही देवता सर्वधी काम
माग भी मनुष्य अनित्य अशाश्वत हैं सत्र चलत्रिजलस्य धर्मधारी हैं सुख के दुःख रूप हो जाते हैं कर्मोदय होते
नीते ही और परे बाद भी अवश्य छोड़ने पड़ते हैं इसलिये जो मेरा तप नियम द्रव्यधर्म का फल
अभिमिक काम में होने तो मैं उग्रकुलोत्पद्य महामाता के पुत्र भोग कुलोत्पन्न महा माता के पुत्र यावत्

यथासाह पढिवेज्जा णो इण्ठे समंठे सेग दसण सावए रुधति, अभिगय जीवा जीवे जाव अट्टमिज्जा पेमाणुरागरत्ते अयमाठसो ? णिगथे पावयणे अट्टे अयं- परमंठे सेसअण्ठे भेर्ण एयात्त्वेणं विहारेण विहरमाणे बहुइ वासाइ समणोवासग परि याग पाठणइ बहुइ वासाइं समणोवासग परियाग पाउणित्ता कालमासे काल किच्चा अण्णयरेसु दवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति ॥ ४७ ॥ एव खलु समणाउत्तो ? तस्स निदानस्स, इमेयान्वे पावफल विवागे ज णो सत्ताएति सीलव्वय गुण वेरमण पच्चक्खाण पोसहोन्वासाइ पढिवजिचए॥७४८॥एव खलु समणा

सादि प्रत प्रत्यास्थान भी नहीं कर सके फक्त वर दर्शन [सम्यक्पत्नी] श्रावक ही होता है जीवा-
मीव का ज्ञान होता है यावत् उस शही की भिनियों भी निन प्रणित धर्म में परमानुरागरक्त हो बैसा
होता है वर वातालाप के प्रसंग में कहावा है कि-प्रहो आयुष्यन्तो ! निर्णय के प्रवचन रूप धर्म है वही
अथ है वही परमार्थ है देव अनर्थ है वर इस प्रकार सम्यक्त्व धर्म के व्यवहार में वर्तता हुआ पशुत वर्ग
पर्यंत अयमोपासक की पय य का पावन कर, कालके अवसर आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी देवलोक में
देवता में नृत्यभ होवे ॥ ८७ ॥ यों निश्चय, प्रहो अग्रण आयुष्यन्तो ! उस नियान के इस प्रकार पाप
रूप फल विपाक होते हैं वर व्यावक के वारह प्रत पापपाषासादि नहीं कर सकता है ॥ ७ ॥ ४८ ॥

रुसो? मध्मेपण्णसे तच्च सन्व जाव सेय परक्खमेमाणे वेवामाणुस्सएहिं कामभागेहिं निवे-
यगण्ठेज्जा, माणुसगस्स खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासय जाव त्रिप्पजहणिज्जा,
दिब्बावि खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासया चलाच्चयुणधम्मा पुणरागमणिज्जा,
पच्छापुब्बंचण अवरसत्रिप्पजहणिज्जा, सति इमस्स तवणियमस्स जाव आगमेस्साण
जइ इमे भवति, उगगपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया जाव पुमत्ताए पच्चायंति,
तत्थण समणोवात्सए भविरत्तामो अभिगय जीवाजीवे जाव फासुएणं एसणिज्जेण
असणं पाण स्वाइमं साइमेण पहिलासेमाणे विहरइस्सामो, सेत्त साहु

यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने धर्म का यावत् वस में साधु साध्वी पराक्रम फोड़ते हैं वे
देवता संबंधी और मनुष्य संबंधी काम भोग से निवृत्ति पाए करते हैं वे विचार करते हैं कि—मनुष्य
संस्था काम भाग भी अधृव अनित्य है अशाश्वत है छोड़ने योग्य है, जैसे ही देवता संबंधी काम
भोग भी मधृव अनित्य अशाश्वत है सर्व फलविज्य ह्य धर्मधारी सुख के दुःख रूप हो जाते हैं कर्मोदय होते
जीते ही और मरे बाद भी अवश्य छोड़ने पड़ते हैं इसलिये जो मेरा तप नियम द्वापर्य का फल
अभिमिक काल में होवे तो मैं उग्रकुलोत्पन्न महामाता के पुत्र भोग कुलोत्पन्न महा माता के पुत्र यावत्

यथासाह पढिवज्जेजा, जो इणट्टे समट्टे सेग वसण सावण रुधति, अभिगय जीवा-
जीवे जाव अट्टमिजा पेमाणुरागरचे अगमाठसो ? णिगगये पावयणे अट्टे अयं-
परमट्टे सेसअणट्टे भेण पूयाख्वेण विहारेण विहरमाणे बहुइ वासाइ समणोवासग परि-
याग पाठणइ बहुइ वासाइ समणोवासग परियाग पाउणिन्ता कालमासे काल
विखा अण्णपरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववचारो भवति ॥ ४७ ॥ एव खलु
समणाउसो ? तस्स निदानत्स, इमेयाख्वे पावफल त्रिवागे ज णो सचाएति
सीलव्वय गुण वेरमण पच्चक्खाण पोसहोउवासाइ पढिवजिचए ॥ ४८ ॥ एव खलु समणा

सादि अत्र प्रत्याख्यान भी नहीं कर सके फक्त यह वर्धन [सम्यक्स्त्री] श्रावक ही होता है जीवा-
जीव का ज्ञान होता है यावत् उस इष्टी की भिनियों मी जिन प्रणित धर्म में परमानुरागरक्त हो बैसा
होता है वह वातालाप के प्रसंग में कहता है कि-अहो आयुधन्तो ! निर्धर्म के प्रवचन रूप धर्म है यही
अप है यही परमार्थ है देव्य मनर्थ है वह इस प्रकार सम्यक्त्व धर्म के व्यापार में सर्वथा इत्था बहुत वर्ष
पर्यंत अयणोपासक की पय य का पालन कर, कालके अवसर आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी देवलोक में
वेष्टताः नै उत्पन्न होते ॥ ४७ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुधन्तो ! उस नियान के इस प्रकार पाप
रूप फल विपत्त होते हैं यह श्रावक के पारह अत पापपापवासादि नहीं कर सकता है ॥ ७ ॥ ४८ ॥

उसो? मरुधम्मेपण्णचे तंचव सन्व जाव सेय परक्कमेमाणे देवामाणुस्सएहिं कामभागेहिं निवे-
यगच्छेज्जा, माणुसगस्स खलुकाममोगा अधुना अणितिया असासय जाव विप्पजहणिज्जा,
दिव्वात्रि खलु काममोगा अधुवा अणितिया असासया चलाचयणधम्मा पुणरागमणिज्जा,
पच्छापुवंचण अवसरसधिप्पजहणिज्जा, सति इमस्स तवणियमस्स जाव आगमेस्साण
जइ इमे मयति, उग्गपुचा महामाठया भोगपुचा महामाठया जान पुमच्चाए पच्चायति,
तत्थण समणोधासए भविरसामो अभिगय जीवाजीवे जाव फासुएणं एसणिज्जेणं
अरणं पाण खाइमं साइमेणं पढिलाभेमाणे विहरइस्सामो, सेच साहु

पों निश्चय, भगो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने पर्यं करा यावत् उस में साधु साध्वी पराक्रम फोड़ते हैं वे
देवता संबंधी और मनुष्य संबंधी काम भोग से निवृत्ति धारण करते हैं वे विचार करते हैं कि-मनुष्य
संबंधी काम भाग भी अशुभ अनिष्ट हैं अशाश्वत हैं छोड़ने योग्य हैं, ऐसे ही देवता संबंधी काम
भाग भी अशुभ अनिष्ट अशाश्वत हैं सब फलविषयलक्ष्य धर्मपारी हैं सुख के दुःख रूप होमाते हैं कर्मोदय होते
जीते ही और मरे बाद भी अनश्वर छोड़ने पड़ते हैं इसलिये जो मेरा तप नियम ब्रह्मचर्य का फल
मर्यादित काल में होने तो मैं ब्रह्मकुलोत्पन्न महायाता के पुत्र भोग कुलात्पन्न महा माता के पुत्र यावत्

॥ ४९ ॥ एवं खलु समणाउसो ! निगयोवा निगयोवा निदाण किंवा
तरसठाणस्स अणालाइय जाव देवलोएसु देवताए उववचारे भवति, सेण ताओ
देवलोगाओ आउक्खएण जाव किं ते आसगस्स सदति ॥ ५० ॥ तस्स तहप्पगारस्स
परिसजायस्स जाव पडिसुणेजा ? हता पडिसुणेजा सेणं सहदेजा ? हता सहदेजा सेणं
भीलव्वय जाव गेसहोववासाइ पडिवजेजा ? हता पडिवजेजा सेणं मुढे भविचा
अगाराओ अणगारियं पव्वएजा ? णो इणहेसमहे, सेण समणोवासए भवति, अभिगय

पुरुष पने भवतार पारनकर, तहाँ में श्रमणोपासक (ब्राह्मण) होवगा, जीवानीच का जान यावत् वहाँ
कालुक (निर्भीक) एपनीक (निर्दोष) अपनी पकान मुलबास साधु साधियों को प्रविलम्बता हुआ
विवरणा में ऐसा होतुओ भज्या ॥ ४९ ॥ यों निधय ओ श्रमण आयुष्यपुर्णकर ! साधु साध्वी नियानाकर
इस स्थानकी आनोपना प्रतिश्रमण किये बिना आयुष्यपुर्णकर अन्य किसी देवलोक में देवता पने उत्पन्न होवे,
फिर वह नस देवे । आयुष्य का सपरक यावत् अनुव्यपने उत्पन्न होने यावत् एक को बोलते पार
पाँच सदे हो । प्राप्ता है ! ॥ ५० ॥ प्रभु उसको तपारूप श्रमण महापका उपदेश श्रवण शेषे क्या ? हाँ
होता है । तब ही भी होने ? हाँ होती है प्रभु-वह ब्राह्मण के बारायत पोषणोपासदि करनी

जीवाजीवे जाय वहिलाभेमाणे विहरति ॥ सेणे प्याख्खेण विहारेण विहरमाणे, बहु-
 णिवासाणि समणोवासागरियागे पाउणइ रत्ता अवाहति उप्पाणसिवा अणुप्पन्नेसिवा
 चट्ठई भत्ताई अणसणाइ पच्चक्खाइ रत्ता बहुहि भत्ताइ अणसणाइ छेवेइ रत्ता, आलोइए
 पाडुक्खत्ते समाहिपत्ते कालमासे कालकिष्वा अणयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववसारो
 भवति ॥ ५१ ॥ समणाउत्तोत्तस्स निवाणस्स इमेयान्त्वे पावफलविवागे जेण णो संचाएति
 सव्वओ सव्वयाणं मुंडे भविच्चा अगाराओ अणगारिय पव्वइत्तए ॥ ८ ॥ ५२ ॥ एव

करने वाला भी होवे क्या? हा होता है प्रश्न-वद् गृहस्थवास छोड़कर साधुपना धारण कर सकता है क्या? यह
 अर्थ समर्थ नहीं अर्थात् साधुपना नहीं छेसकता है फक्त वह श्रमक पना ही धारण कर सकता है, वह
 श्रावक जीव अर्जीब का ज्ञान याचत् अश्नादि साधुओं को प्रतिलाभता हुआ विचरता है यों बहुत वर्ष
 श्रावक पना पालकर वाश-भ्याधि प्राप्त होते अथवा नहीं होते संथारा करते हैं बहुत भक्त का अनशन का
 ऐतदन कर आलोपना प्रतिक्रमण कर समाधी युक्त काल के अवसर में काल प्राप्त हो अन्य किसी देवलोक में
 देवतापने उत्पन्न होता है ॥ ५१ ॥ यों निश्चय अने श्रमण आयुष्ययन्तो ! वक्त नियाने से इस प्रकार
 विपारु रूप फल इति है कि वह सर्व विरतिपना साधयना धारण नहीं कर सकता है ॥ ८ ॥ ५२ ॥ यों निश्चय अने

॥ ४९ ॥ एवं खलु समणाउत्तो ! निग्गथोवा निग्गथीवा निदानं किञ्चा
 तरसठाणस्स अणालाइय जाव देवलो९सु वेवत्ताए उववत्तारो भवति, सेण ताओ
 देवलोगाओ आउक्खएणं जात्र किं ते आसगस्स सवति॥ ५० ॥ तरस्सणं तहप्पगारस्स
 पुरिसजायस्स जाव पडिसुणेजा ? हता पडिसुणेजा सेणं सवहेजा ? हता सवहेजा सेणं
 भालत्त्वय जाव पोसहोववामाइ पडिवज्जेजा ? हता पडिवज्जेजा सेण मुढे भविच्चा
 अगाराओ अणगारियं पव्वएजा ? जो इणहेसमहे, सेण समणोवासए भवति, अभिगय

पुरुष पने अवतार धारनकर, तहाँ में श्रमणोपासक (श्रावक) होवुगा, जीवामीव का जान यावत् वहाँ फ़ाल्गुन (निर्भीव) एपनीक (निर्दोष) अन्नपानी पकान मुलवास साधु साध्वीयों को प्रतिलामता हुआ विवरुंगा में ऐसा होनुतो भज्या ॥ ४९ ॥ यों निधय अरो श्रमण आयुज्यन्तो ! साधु सारवी नियानाकर उस स्थानकी आनोचना मतिक्कण किये बिना आयुष्यपूर्णकर अन्य किसी देवलोक में वेवता पने छत्पन्न होवें, फिर वह उस देवलोक से आयुष्य का लयकर यावत् मनुष्यपने उत्पन्न होने यावत् एक को योसुते धार पांच लहे हो घोसे क्या आत्रा है ! ॥ ८० ॥ प्रश्न उसको तथारूप श्रमण महापफा दपेदेष्ट श्रमण होवे क्या? हाँ होता है मन्त्र श्रद्धान गनीत रुची भी होने! हाँ होती है प्रश्न-चर श्रावक के बारावत् पोषपोपावासदि करनी

निगथोवा निगथीया निवाणं किञ्चा तस्स ठाणस्स मणालोइय अपडिक्कते सव्व तंचेव,
 सेण मुंढे भवित्ता अगाराओ अणगारिय पव्वएज्जा ? हुता पव्वएज्जा, सेण तेणेव भवगाह
 नेण सिञ्जेज्जा जाव सव्वदुक्खाग अंतकरेज्जा ? णोइणट्ठे समट्ठे ॥ सेणं भवति से जे
 मणगारा भगवतो इरिया समिया जाव दमयारी, तण विहरणे विहरमाणे बहूहि
 वासाहिं साम ण परियाग णट्ठणइ २ चा अवाइसि उप्पणासिवा जाय भच पच्चक्खाएज्जा,
 जाव कालमासे कालकिञ्चा, अण्णयरेसु देवलोएसु देवसाए उववचारो भवति ॥ ५४ ॥

यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्यन्तो ! उक्त प्रकार का जो साधु साध्वी नियाना करके उस स्थान की
 आलोचना प्रतिक्रमण किया बिना आयुष्य पूर्ण कर महा ऋद्धिक्र देवता होवे वहां से चक्कर उक्त
 प्रकार के कुम्भ में उत्पन्न होवे प्रश्न—वह श्रमण ग्राहण से धर्म श्रवण कर दीक्षा ले सकता है ? हां
 दीक्षा ले सकता है प्रश्न—वह उस ही भ्रम में सिद्ध बुद्ध मुक्त होता है ? यह अर्थ समर्थ नहीं, अर्थात्
 मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता है फलक वह साधु भगवत् ईर्या आदि समिति समिता यावत् गुप्त ब्रह्मचारी
 इस प्रकार आधार पास्तो हुवे बहुत वर्ष साधुपना पालन कर पाया उत्पन्न हुवे तथा बिना बापा ही
 संनिधना कर भक्त प्रसास्यान कर काल के अवसर में काम पूर्ण कर किसी देवलोके में देवतापने उत्पन्न

खलु समणाउत्सो ! मयधम्मे पण्णसे जाव सेय परक्कममाणे देवमाणुत्सएहिं काम भोगेहिं निवेयंगच्छेज्जा माणुत्सगा खलु कामभोगा अधुवा जाव विप्पजहणिज्जा, देवावि खलु कामभोगा अधुवा जाव पुणरागमणिज्जा, सतिजइ इमस्स तव नियम जाव वयमवि आगमेस्साण, जाइमाइ कुलाइ मयति तंजहा-अतकुलाणिवा, पतकु-लाणिवा, तुच्छकुलाणिवा, दरिद्र कुलाणिवा, किविण कुलाणिवा, भिक्खागकुलाणिवा, माहणकुलाणिवा एएसिणे अण्णतरसि कुलसि पुमचाए पच्चायति, एसंमे आया परियाएसुणीहढे भविस्सति सेतंसाहु ॥ ५३ ॥ एव खलु समणाउत्सो !

जैने पर्य कहा यावत जग में निरर्थक निर्ग्रथो पराक्रम करे वे देवता संबंधी मनुष्य संबंधी काम भोग स विरक्त बने विचार करे कि निश्चय मनुष्य संबंधी काम भोग अप्रबुद्ध हैं यावत छाड़ने योग्य हैं तैसे ही देवता संबंधी काम भोग भी अधुना यावत पुनरागमनी हैं जो भरे तप सपथ आदि करनी का फल हो तो मुझे भोगे कइया ऐसे कुलों में जय होवे वन कुलों के नाम-^१ अन्तकुल-गरीब घर में, २ प्रांत कुल बहुत गरीब कुल में ३ तुच्छ कुल निर्धन कुल में ४ दरिद्र कुल में ५ कृषण कुल में, ६ भिक्षुगरी के कुल में, ७ ब्राह्मण के कुल में इन कुलों में के किसी भी कुल में पुत्रपत्ने उत्पन्न होवूं कि जिस कर भोग-पिक्र काम में मुझे क्षीसा धारन करने में किसी प्रकार से अंतराय नहीं भाये, ऐसा हो तो अच्छा ॥ ५३ ॥

अप्यण भात्रेमाणस्त अणति अणुचरे निव्वाधाए निरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवल
वरणाणदसणे समुपजेव्वा ॥ ५६ ॥ तएण से समणे भगव अरहा भवति, जिणे
केवली सव्यणुसन्वदरिती, सदेवमणुयासुराए जाय वहूइ वासाइ केवलि
परियाग पाउणइ, वहूइ वासाइ केवल परियाग पाउणिचा अप्पणो
आउसेस आभोइइ २ चा भत्तं पच्चक्खाइ २ चा वहूइ भत्ताइ अणसणाई
छुदेति २ चा तओपण्छा चरमेहि उस्सासनिसासेहि जाव सन्व हुक्खाण अत
करेति ॥ ५७ ॥ त एउ खलु समणाउसो ! तस्स अनिदाणस्स इमेयारूवे

प्रात जिस को किसी का पहना नहीं ऐसा निरावरण, जो स्वण्डित नहीं ऐसा कृत्स्न, और जो अपूरा
नहीं ऐसा प्रतिपूर्ण प्रपान केवल ज्ञान केवल दर्शन को प्राप्त करते हैं ॥ ५६ ॥ सब वे भगवत अर्हंत
होते हैं जिनेश्वर होते हैं केवली होते हैं सर्वज्ञ सर्वदर्शी होते हैं, सर्व देवता मनुष्यों के वंदनीय पूजनीय
होते हैं यत्र न इत धर्म पर्यंत केवली पर्याय का पालन कर अपना आयुष्य को अंतर्देखते हैं आयुष्य
का भत देखकर भक्त प्रत्याख्यान करते हैं, पशुव भक्त अनशन का छेदनकर तथा फिर अन्तिम उश्वास
निश्वास सर्व धारीरिक मानसिक व जम्मादि सब दुःख का अंत करते हैं ॥ ५७ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण
उस नियान नहीं करने का इस प्रकार का आत्म कल्याणकारी फल होता है नियाना नहीं करनेवाले

एव खलु समुपाठसो ! तस्मिन् निदानस्तस्य इमेपाख्ये पावफलविवागे ज जो संचाएति
तेजैव मवगाहणेन सिद्धेज्जा जाय सव्यदुक्खार्ण अंत करेज्जा ॥ ५५ ॥ एव खलु
समुपाठसो ! मधुमो पण्ये इणमेव निगये पावयणे, सेयं जाय परक्खमेज्जा, सव्यकाम-
विरए, सव्यरागविरए, सव्यसंगातीते, सव्यसिणेहाक्ते, सव्यचारिचएपरिबुद्धे, तस्मिन्
मगवतस्स अणुचरेण णाणेण, अणुचरेणं दसणेणं जाय अणुचरेण परिनिव्याण मग्गेणं

होये ॥ ५६ ॥ यो निश्चय, अहो अयण आयुष्यन्तो ! वयं नियाना का इस प्रकार का फल रूप विपाक
कस है कि वह नियाना हूँ उस ही मय में मुक्ति जाने समर्थ नहीं होता है ॥ ९ ॥ ५५ ॥ यो निश्चय,
अहो अयण आयुष्यन्तो ! मैंने यर्म कहा है कि यह निर्ग्रय के प्रबन्ध है वे सर्व दुःख के भव करने-
वाले हैं इस से साधु साध्वी पराक्रम फोड़ते हैं वे सर्वपा प्रकारे काम बिकार से विरक्त होते हैं
सर्वपा रागद्वेष से विरक्त होते हैं सर्वपा-न्त्री आदि की संगती से विरक्त होते हैं, सर्वपा प्रकार का
घरीरादि का झेद का छेदन करते हैं सर्वपा प्रकार की जो धारिष की क्रियाओं है उस के
पारदार से परिहरे हुये विचरते हैं वन साधु मगवत को साध्वी प्रगल्भी को अनुसर प्रधान ज्ञान प्रधान
वर्चन प्राप्त होता है पावद् कषाय क्षय के मार्ग में अपनी आत्मा को मारते हुये विचरत हैं वे जिस का
भन्त नहीं हो ऐसा अनन्त जिस जैसा दूसरा नहीं ऐसा अनुसर, जिसकी किसीसे घाव नहीं हो ऐसा निर्घ्नो

सदेवमणुयासुराः परिसाः मज्जगपुचेव एव आइक्खइ, एव भस्सेइ एव पणनेइ
 एव, पळेवेइ धायातिट्ठाण नामज्जसयण सअट्ठ, सहेऊ सकारण, ससुस, समस्य,
 सवागरण, जान भुजो भुजो उवदसेत्तिवेमि ॥ ६० ॥ इति वसवीदसा सम्मत्ता ॥ १० ॥
 इति दसासुयखध सुस सम्मत्ता ॥ २७ ॥

सुरासुर मरित पोरण के मध्य में विरामे हुवे ऐसा कहा ऐसा भाषा, ऐसा प्ररुपा यह आत्मा को
 कर्म रूप निदान (नियाना) ग्रहण करने का अध्याय अर्थ सहित, हेतु सहित, कारण सहित सूत्र सहित
 अथ सहित, वागरनाख्यास्या सहित यावत् वारम्बार उपदेशा ॥ ६० ॥ ऐसा भगवत्तने कहा तैसा ही
 भरो जम्पु ! मैंन तेरे से कहा ॥ इति दक्षमी दक्षा सपूण ॥ इति दक्षा श्रुतस्त्वधनामक सूत्र सपूर्णया ॥ ७ ॥

कछ्छाणे फलविवारे जं तेनेव भवगाहणेणं सिज्झति जाव सव्व पुक्खाण अत
करेति॥५८॥ तएण ते बहवे णिग्गथाय निग्गधीओय समणस्स भगवओ महावीरस्स
अतिए एयणट्ठ सोच्चा णिसम्भ समण भगव महावीरं वदइ नमसइ तस्स
ठाणस्स आलोइयति पडिक्कंति जाव अहरिह वायच्छिच्च तओ कम्मपटिहवज्जति ॥५९॥
तेण कालेणं तेण समएण समण भगव महावीरे रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए बहुण
समणाण बहुण समणीण बहुणं सावगाण बहुणं सावियाण बहुणं देवाण बहुण देवीण,

वे सापु साध्वी भगवंत उस ही भव में सिद्ध बुद्ध पुक्त परिनिर्वाण हो सर्व दुःख का क्षय करते हैं ॥५८॥
वह वे बहुत से सापु साध्वीयों अरण्य भगवंत महावीर स्वामी के पास से वक्त कथन अरण्य कर अब
धारकरके नियाने के फल से भयभीत हुवे, अरण्य भगवत महावीर स्वामी को वदना नमस्कार किया
वदना नमस्कार कर प्रथम जो श्रेणिक राजा विष्णुना राजाओं देखकर नियाना किया था उसकी आलो-
चना निंदना प्रतिक्रमण किया, यावत् यथा उचित उस का प्रायश्चित्त रूप तप कर्म को अंगीकार किया
॥ ९ ॥ उस काल उस समय में अरण्य भगवंत महावीर राजगृही नगरी के गुणसिल धैर्य में बहुत

सापु, बहुत साध्वी, बहुत आचरक, बहुत आधिकार, बहुत देवता, बहुत देवी, देवता साहित, मनुष्य सहित,

॥ इति सप्तविंशतितम ॥

॥ दशा श्रुतस्कन्ध सूत्र-चतुर्थछेद-समाप्तम् ॥

श्रीराष्ट्र २४६५ मातृपद नवी १२ सुप्रचार

शास्त्रोद्धार प्रारम्भ

वीराब्द २४४२ ज्ञान पथमी

इति

दशाश्रतरुं व सूत्र

समाप्तम्

शास्त्रोद्धार समाप्ति

वीराब्द २४४६ विजयादशमी

